अध्याय

1

परिचय

मानव पारिस्थितिकी और परिवार विज्ञान –

विषय का उद्भव और जीवन की गुणवत्ता के प्रति इसकी प्रासंगिकता

आइए सबसे पहले इस विषय ''मानव पारिस्थितिकी और परिवार विज्ञान'' के शीर्षक को समझ लें। शब्दकोश में शब्द ''पारिस्थितिकी'' की व्याख्या दो तरीकों से की गई है। एक, जीवविज्ञान की वह शाखा जिसमें जीवधारियों और उनके पर्यावरण के आपसी संबंध का अध्ययन किया जाता है। दूसरे, यह जीव और पर्यावरण के बीच उसके बहुआयामी संबंधों को बताता है। प्रस्तुत संदर्भ में, जीवविज्ञान का आशय है, ''मानव'' और इसीलिए ''मानव'' शब्द के बाद ''पारिस्थितिकी'' शब्द को जोड़ दिया गया है।

इस विषय के माध्यम से आप मानव पर्यावरण के साथ उसके संबंध का अध्ययन करेंगे। इसके अतिरिक्त पारिस्थितिकी के उन भौतिक, आर्थिक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक तत्वों का भी अध्ययन करेंगे जिनका सक्रिय संबंध बच्चों, किशोरों और वयस्कों के साथ है।

''परिवार विज्ञान'' की अभिव्यक्ति इस शीर्षक का उतना ही महत्वपूर्ण भाग है। जितना कि आप सहमत होंगे कि अधिकांश व्यक्तियों के जीवन में उसका परिवार प्रमुख होता है। परिवार में बच्चों का पालन-पोषण किया जाता है, ताकि वे एक वयस्क के रूप में अपनी स्वतंत्र पहचान को अर्जित एवं विकसित कर सकें। इस विषय का अध्ययन करते हुए, छात्राओं को परिवार के संदर्भ में ''व्यक्ति'' की भूमिका समझने का मार्गदर्शन किया जाएगा। व्यक्ति समाज की एक महत्वपूर्ण सामाजिक इकाई है। 'मानव पारिस्थितिकी और परिवार विज्ञान' में शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया का एक समेकित मार्ग अपनाया गया है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि इसमें परिवारों के सदस्यों के रूप में मानवों और समाज के पर्यावरण के बीच पारस्परिक क्रियाओं को भी समझाया गया है। यह उनकी पारिस्थितिकी के साथ सह क्रियात्मक संबंध बनाता है, जिसके अंतर्गत भौतिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक-सांस्कृतिक और आर्थिक संसाधन शामिल हैं।

कक्षा 11 की पाठ्यचर्या में, आप पाएंगे कि किशोरावस्था पर विशेष रूप से ध्यान दिया गया है, क्योंकि इस अवधि को एक व्यक्ति के जीवन का निर्णायक मोड़ माना जाता है। इस प्रकार आप जानेंगे कि किशोर किस प्रकार अपनी समझ का विकास करते हैं, और भोजन तथा अन्य संसाधन, कपड़े और पौशाकें एवं संचार आदि उनके जीवन में क्या भूमिका निभाते हैं।

मानव पारिस्थितिकी और परिवार विज्ञान से मिलता-जुलता एक अन्य विषय गृहविज्ञान है जो हालांकि यथातथ्य रूप से उससे थोड़ा भिन्न होता है। इसे उच्चतर माध्यमिक और विश्वविद्यालय स्तरों पर देश के विभिन्न भागों में इसी शीर्षक के अंतर्गत पढ़ाया जाता है। बदलते समय के साथ अध्ययन के अनेक विषयों ने नया रूप ले लिया है और एक अधिक समकालीन नामकरण प्राप्त किया है (उदाहरण के लिए जीवविज्ञान को अब जीवन विज्ञान का नाम दे दिया गया है। स्कूली स्तर पर गृहविज्ञान की विषय-वस्तु के आधुनिकीकरण की आवश्यकता थी, और मुख्यत: घर और पारंपरिक रूप से लड़कियों और महिलाओं द्वारा किए जाने वाले कार्यों से मुक्त कराने के लिए इसे एक नया शीर्षक दिया जाना था। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने इस कार्य को करने के लिए कई वर्ष पहले विश्वविद्यालय स्तर पर बीड़ा उठाया था।

भारतवर्ष में गृहविज्ञान के क्षेत्र में मानव पारिस्थितिकी और परिवार विज्ञान के विकास के संक्षिप्त इतिहास पर चर्चा की जाएगी। देश के विभिन्न भागों में 20वीं शताब्दी के आरंभ में ऐसे अनेक संस्थान थे जिन्होंने भोजन और पोषण, वस्त्र और वस्त्र उद्योग तथा विस्तार शिक्षा के पाठ्यक्रमों की शुरुआत की थी। इन अलग-अलग विषयों को 1932 में गृहविज्ञान के दायरे में लाया गया, जब दिल्ली में महिला शिक्षा को प्रोत्साहन देने के लिए लेडी इरविन कॉलेज नामक संस्थान की स्थापना की गई। यह ब्रिटिश राज से भारत की स्वतंत्रता के पहले का समय था, जब बहुत कम लड़कियाँ विद्यालय जाती थीं और महिलाओं की उच्चतर शिक्षाओं के शायद ही कोई संस्थान मौजूद थे।

भारत की स्वतंत्रता के आंदोलन में जानी-मानी महिलाएँ शामिल थीं। इनमें से सरोजनी नायडू, राजकुमारी अमृत कौर और कमला देवी चट्टोपाध्याय, जो अखिल भारतीय महिला सम्मेलन की दिग्गज मानी गई हैं, जिन्होंने लेडी इरविन कॉलेज की संकल्पना और स्थापना की। उस समय भारत में लॉर्ड इरविन ब्रिटिश वायसराय थे और उनकी पत्नी लेडी डोरोथी इरविन ने भी इस कॉलेज की स्थापना को समर्थन दिया। अत: यह कॉलेज लेडी इरविन के नाम पर रखा गया। महिलाओं की भूमिकाओं और दायित्वों के विषय में जागरूकता लाने के लिए संस्थापकों ने अनुभव किया कि भारत की युवा महिलाओं को गृहविज्ञान की शिक्षा दी जानी चाहिए। उन्होंने कहा कि यह लक्ष्य घर और समाज दोनों को बराबर महत्त्व देते हुए पूरा किया जाना चाहिए ताकि उन सामाजिक और शैक्षिक असमानताओं को दूर किया जा सके जिन्होंने महिलाओं को अपनी क्षमता तक पहुँचने में बाधा डाली।

इस प्रकार, गृहविज्ञान एक ऐसा विषय नहीं माना गया था, जो केवल ''घर'' के बारे में हो, बल्कि यह एक अंतर विषयक क्षेत्र माना गया जो छात्रों को उनके अपने जीवन तथा अन्य व्यक्तियों और परिवारों के जीवन की गुणवत्ता में सक्षम बनाए। जबकि, आगे चलकर गृहविज्ञान का लेबल (इसे न जानने वाले व्यक्तियों और गैर गृहविज्ञान विषय से जुड़े व्यक्तियों के मन में) प्राथमिक रूप से पाक कौशलों, कपड़े धोने और बच्चों की देखभाल से जोड़ दिया गया। जबकि उच्चतर शिक्षा स्तर पर पाठ्यचर्या के स्तर में सुधार लाया गया तथा व्यावसायिक मानकों को फिर से स्थापित किया गया। हाईस्कूल स्तर पर दोबारा स्थापित करने में अनेक वर्ष का समय लगा, फिर भी इस विषय में महिला वर्ग के साथ तथा ''भोजन पकाने और कपड़े धोने'' को शामिल बनाए रखा। वास्तव में ये ऐसे कुछ कारण हैं जिनकी वजह से लड़कों ने स्कूलों में इस विषय में प्रवेश नहीं लिया अथवा वे इसे पढ़ने से बचते रहे क्योंकि इसे वे केवल लड़कियों का विषय मानते थे। इस विषय के बारे में एक मिथ्या धारणा यह भी थी कि इसमें कम परिश्रम करना पड़ता है।

परिचय

वर्तमान पाठ्यचर्या, जिसने इस पाठ्यपुस्तक की तैयारी में मार्गदर्शन दिया, अपनी विषय-वस्तु और उद्देश्य में समकालीन है। इसे इस प्रकार बनाया और प्रस्तुत किया गया है कि आप इसमें चर्चा के चर्चित मुद्दों से ही उस विषय को पहचान सकेंगे। शीर्षक 'मानव पारिस्थितिकी और परिवार विज्ञान' को पाठ्यक्रम की भावना प्रदर्शित करने के लिए सर्वाधिक उपयुक्त माना गया। जब आप इसके अध्यायों को पढ़ेंगे तब आप अनुभव करेंगे कि इस विषय में अनेक विषय शामिल हैं। इसमें मानव विकास, भोजन और पोषण, कपड़े और पौशाकें, संचार और विस्तार तथा संसाधन-प्रबंधन शामिल हैं। इन विषयों की जानकारी जीवन की गुणवत्ता को बनाए रखने और इसमें वृद्धि के लिए अनिवार्य है, चाहे आप गाँव में रहते हों या एक कस्बे में और चाहे पुरुष हों या महिला। आशा है कि इस पाठ्यपुस्तक से युवाओं के जीवन के विषय में उन प्रश्नों के उत्तर मिलेंगे जिनका उत्तर पाना केवल परीक्षा उत्तीर्ण करने का एक माध्यम नहीं है।

मुख्य शब्द

पारिस्थितिकी, परिवार, किशोरावस्था, गृहविज्ञान, जेंडर, समकालीन, बहुविषयक, जीवन की गुणवत्ता।

■ अभ्यास

क. क्या आप गृहविज्ञान विषय के बारे में जानते हैं? हाँ नहीं

यदि आपका उत्तर 'नहीं' है तो कृपया अपने अध्यापक से पूछें।

उन पाँच शब्दों/संकल्पनाओं की सूची बनाइए जिन्हें आप गृहविज्ञान के साथ जोड़ते हैं।

1. ______________________
2. ______________________
3. ______________________
4. ______________________
5. ______________________

ख. वर्ष के अंत में जब आप यह पुस्तक 'मानव पारिस्थितिकी और परिवार विज्ञान' का अध्ययन कर चुकेंगे तब उन पाँच अध्ययन क्षेत्रों की सूची बनाएँ, जिन्हें आप विषय के साथ जोड़ेंगे।

1. ______________________
2. ______________________
3. ______________________
4. ______________________
5. ______________________

समीक्षात्मक प्रश्न

1. 'मानव पारिस्थितिकी' और 'परिवार विज्ञान' को समझाएँ।
2. क्या आप सहमत हैं कि किशोरावस्था एक व्यक्ति के जीवन का ''निर्णायक मोड़'' है।
3. उन जानी-मानी महिलाओं के नाम बताएँ, जिन्होंने भारत में सर्वप्रथम गृहविज्ञान विषय को महाविद्यालयों में आरंभ करने की संकल्पना की।

   क. ______________________________

   ख. ______________________________

   ग. ______________________________

   घ. ______________________________

इकाई 1

स्वयं को समझना– किशोरावस्था

प्रथम इकाई किशोरावस्था पर केंद्रित है–यह जीवन की वह अवस्था है जिसमें आप इस समय हैं। इस इकाई में मूलतः 'स्वयं को समझने' पर चर्चा की गई है। इसमें विभिन्न विषयों पर आपकी समझ के बारे में चर्चा की गई है। यह विषय आपके व्यक्तिगत और सामाजिक स्तर की पहचान, आपकी पौषणीय और स्वास्थ्य संबंधी आवश्यकताएँ, समय और स्थान के मूलभूत संसाधनों का प्रबंधन, आपके आस-पास मौजूद वस्त्र तथा आपके संचार कौशलों आदि विषयों का अध्ययन करता है। इस इकाई का अंतिम अध्याय किशोर जीवन को परिवार और बड़े स्तर पर समाज के साथ जोड़ता हुआ उसे अगली इकाई की ओर ले जाता है। अगली इकाई में परिवार, विद्यालय, समुदाय और समाज के संदर्भ में व्यक्ति का अध्ययन किया जाएगा।

अध्याय
2

स्वयं को समझना

क. मुझे 'मैं' कौन बनाता है?

उद्देश्य

इस अध्याय के खंड क, ख और ग को पूरा करने के बाद शिक्षार्थी सक्षम होंगे–

- स्वयं को जानने का महत्त्व तथा स्वयं की सकारात्मक अनुभूति के विकास के महत्त्व का विवेचन करने में,
- उन कारकों की सूची बनाने में जो स्वयं की पहचान तथा स्वयं के विकास पर प्रभाव डालते हैं,
- यह विश्लेषण करने में कि किशोरावस्था में स्वयं की पहचान तथा स्वयं के विकास के लिए स्वयं को जानना महत्वपूर्ण क्यों है, और
- शैशवावस्था, बाल्यावस्था और किशोरावस्था के दौरान स्वयं की विशेषताओं का वर्णन करने में।

2क.1 परिचय

हमारे माता-पिता, भाई-बहन, अन्य संबंधियों, मित्रों तथा हमारे बीच अनेक बातें सामान्य हैं परंतु फिर भी हम में से प्रत्येक अलग व्यक्ति है, जो अन्य सभी से भिन्न है। इस अनोखेपन की यह अनुभूति हमें अपने होने का एहसास कराती है– 'मैं' होने की अनुभूति, जो 'आप' 'वे' और 'अन्य' से अलग है। हम 'स्वयं' की इस अनुभूति का विकास कैसे करते हैं? हम अपने बारे में क्या सोचते हैं और हम अपना वर्णन किस प्रकार करते हैं– क्या यह समय के साथ बदल जाता है? 'स्वयं' के कौन से तत्त्व हैं? हमें 'स्वयं' के बारे में अध्ययन क्यों करना चाहिए? क्या हमारा 'स्वयं' हमारे, लोगों से मेलजोल के ढंग को प्रभावित करता है? इस इकाई में हम इन्हीं तथ्यों और 'स्वयं' के अन्य रोचक पक्षों का अध्ययन करेंगे।

स्वयं की संकल्पना से जुड़ी हुई दो अन्य संकल्पनाएँ हैं– पहचान और व्यक्तित्व। यद्यपि मनोवैज्ञानिक परिभाषाओं में इन तीन संकल्पनाओं में अंतर करते हैं फिर भी ये संकल्पनाएँ आपस में काफी मिलती-जुलती हैं। आमतौर पर सामान्य उपयोग में हम इन शब्दों का आपस में बदलाव भी कर देते हैं।

2क.2 स्वयं क्या है?

वेबस्टर के तीसरे नए अंतर्राष्ट्रीय शब्दकोश में 500 प्रविष्टियाँ हैं जो ''स्वयं'' से शुरू होती हैं। 'स्वयं' की अनुभूति का अर्थ है – यह अनुभव करना कि हम कौन हैं और कौन-सी बातें हमें अन्य लोगों से भिन्न बनाती हैं। किशोरावस्था – जीवन की वह अवधि जिससे आप इस समय गुज़र रहे हैं – के दौरान हम अपने बारे में सबसे अधिक सोचना शुरू कर देते हैं कि हम कौन हैं, ''मुझे'' 'अन्य' से भिन्न कौन-सी बातें बनाती हैं। इस अवस्था में किसी अन्य अवस्था की तुलना में हम 'स्वयं' को परिभाषित करने की अधिक कोशिश करते हैं। आप में से कुछ लोगों ने यह प्रश्न बहुत बार सोचा होगा, जबकि आप में से कुछ इस बात से अवगत नहीं होंगे कि वे इन पक्षों के बारे में सोचते रहे हैं।

क्रियाकलाप 1

मैं से शुरू होने वाले इन वाक्यों को पूरा करिए–

1. मैं...हूँ।
2. मैं...हूँ।
3. मैं...हूँ।
4. मैं...हूँ।
5. मैं...हूँ।
6. मैं...हूँ।
7. मैं...हूँ।
8. मैं...हूँ।
9. मैं...हूँ।
10. मैं...हूँ।

आपने अपने बारे में जो वक्तव्य लिखे, उनकी दोबारा जाँच करें – इनमें से कुछ आपके अपने भौतिक पक्षों को दर्शाते हैं, आपने अपने शरीर के बारे में वर्णन किया है; कुछ वक्तव्यों में आपने अपनी अनुभूतियों और भावनाओं को दर्शाया है; कुछ में आपने अपनी मानसिक क्षमताओं के संदर्भ में बताया है; कुछ वक्तव्यों में आपने अन्य व्यक्तियों के साथ अपने संबंध बताए हैं जो आपके द्वारा निभाई गई भूमिकाओं और प्रतिदिन के संबंधों के संदर्भ में हैं, जैसे– बेटा/बेटी, भाई/बहन, छात्र/छात्रा आदि। अर्थात् आपने अपने परिवार और समुदाय में सामाजिक संदर्भों के संबंध में स्वयं को परिभाषित किया है। आप में से कुछ ने स्वयं को अपनी संभाव्यताओं या क्षमताओं के संदर्भ में तथा कुछ ने अपनी मान्यताओं के संदर्भ में दर्शाया है। कुछ बातों में आपने स्वयं को एक कर्ता के रूप में वर्णित किया है जो आप एक व्यक्ति के रूप में निष्पादित करते हैं, कुछ में एक अभिकारक के रूप में, जबकि अन्य में आपने 'स्वयं' को एक विचारक के रूप में वर्णित किया है। इस प्रकार आप देख सकते हैं कि 'स्वयं' के अनेक आयाम हैं। मुख्य रूप से हम यह

कह सकते हैं कि व्यक्तिगत तथा सामाजिक रूप में यह 'स्वयं' के विभिन्न आयाम हैं। व्यक्तिगत 'स्वयं' के वे पक्ष हैं जिनसे केवल आप जुड़े हैं जबकि सामाजिक 'स्वयं' का अर्थ उन पक्षों से है जहाँ आप अन्य व्यक्तियों के साथ जुड़े हुए हैं। इनमें आपस में बाँटना, सहयोग, समर्थन, और एकता आदि शामिल हैं।

हम कह सकते हैं कि 'स्वयं' शब्द का अर्थ उनके अनुभवों, विचारों, सोच तथा अनुभूतियों का संपूर्ण रूप है जो स्वयं के विषय में है। यह एक विशिष्ट ढंग है, जिससे हम 'स्वयं' को परिभाषित करते हैं। **यह विचार कि हम 'स्वयं' हम हैं, यह 'स्वयं' की धारणा की ही अभिव्यक्ति है।**

आपने 'स्वयं' संकल्पना और स्वाभिमान शब्दों को अपने तथा अन्य व्यक्तियों के संदर्भ में अवश्य सुना और उपयोग किया होगा। जब आप उनका उपयोग करते हैं तब आपका क्या आशय होता है? नीचे दिए गए खंड में अपने विचार लिखें तथा खंड के नीचे दी गई परिभाषा को पढ़ने के बाद इन पर चर्चा भी करें।

आपके विचारों के लिए...

स्व-संकल्पना तथा **स्वाभिमान** पहचान के तत्त्व हैं। स्व-संकल्पना एक व्यक्ति का विवरण है। यह ''मैं कौन हूँ''?, प्रश्न का उत्तर देता है। हमारी इस बात की संकल्पना में हमारी विशेषताएँ, अनुभूतियाँ और विचार और हम क्या करने में सक्षम हैं, शामिल होते हैं।

स्व-संकल्पना का एक महत्वपूर्ण पक्ष स्वाभिमान है। उन मानकों, जिन्हें हमने स्वयं अपने लिए तय किया है के अनुसार हम स्वयं के बारे में क्या सोचते हैं, हमारा 'स्वाभिमान' कहलाता है। काफ़ी सीमा तक यह समाज से प्रभावित होता है। यह एक व्यक्ति का स्व-मूल्यांकन है।

2क.3 पहचान क्या होती है?

इस पृष्ठ पर दिए गए क्रियाकलाप के संदर्भ में, आप किस निष्कर्ष पर पहुँचे – ''हाँ'' आप वही व्यक्ति हैं या ''नहीं'' आप वही व्यक्ति नहीं है अथवा आप हाँ और नहीं दोनों उत्तर देते हैं! यह संभव है कि आपके उत्तर हाँ और नहीं दोनों में हों। पिछले कुछ वर्षों से आपके शरीर में कई बदलाव हुए हैं। पहले के मुकाबले आज आप अधिक लोगों को जानते हैं तथा उनके साथ आपके संबंध हैं। अब आपकी बात को समझने तथा उस पर प्रतिक्रिया देने का तरीका संभवतया बदल गया है, आपने अपनी कुछ मान्यताओं और मूल्यों को भी बदल दिया है और शायद आपकी पसंद और नापसंद भी बदल गई है, तो आप वास्तव में वही व्यक्ति नहीं हैं, जो एक वर्ष पहले थे। फिर भी आप जितना भी पीछे को याद करें आपके अंदर वह व्यक्ति होने की एक त्रुटिहीन अनुभूति निहित है, हममें से अधिकांश व्यक्ति अपने पूरे जीवन में निरंतरता और एकरूपता का भाव बनाए रख सकते हैं चाहे उनके जीवन में दशकों से कितने भी बदलाव और निरंतरता में विघ्न आए हों। दूसरे शब्दों में हमारे अंदर पहचान की एक अनुभूति होती है, एक ऐसी अनुभूति जिसे हम पूरे जीवन साथ लेकर चलते हैं। ठीक वैसे ही जैसे स्वयं के मामले में हम व्यक्तिगत पहचान और सामाजिक पहचान के बारे में बात कर सकते हैं। व्यक्तिगत पहचान एक व्यक्ति की उन विशेषताओं को संदर्भित करती है जो उसे अन्य से भिन्न बनाती है। सामाजिक पहचान का अर्थ एक व्यक्ति के वे पक्ष हैं जो उसे समूह से जोड़ते हैं जैसे व्यावसायिक, सामाजिक या सांस्कृतिक। इस प्रकार जब आप स्वयं को एक भारतीय के रूप में सोचते हैं तो आपने स्वयं को एक देश में रहने वाले लोगों के समूह के साथ जोड़ा है। जब आप अपने आप को एक गुजराती या मिज़ो के रूप में बताते हैं, तब आप कहते हैं कि आप उस राज्य में रहने वाले लोगों की कुछ विशेषताएँ रखते हैं और यह विशेषताएँ आपको भारत के अन्य राज्यों में रहने वाले लोगों से भिन्न बनाती हैं। इस प्रकार एक गुजराती होना आपकी सामाजिक पहचान का एक आयाम है ठीक उसी तरह जैसे एक हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई या एक शिक्षक, किसान या वकील होना।

क्रियाकलाप 2

क्या आप वही व्यक्ति हैं जो 5 साल पहले थे? इस विषय पर कुछ देर सोचें तथा नीचे दिए गए स्थान में अपने विचार तथा उन विचारों के कारण लिखें।

अतः 'स्वयं' प्रकृति में बहुआयामी होता है। व्यक्ति के शिशु से किशोरावस्था में विकसित होने के दौरान इस 'स्वयं' में भी बदलाव आते हैं। अगले अध्याय में शैशवावस्था, बाल्यावस्था और किशोरावस्था की विशेषताएँ बताई गई हैं।

मुख्य शब्द

स्वयं, स्व-संकल्पना, स्वाभिमान, पहचान

समीक्षात्मक प्रश्न

1. ''स्वयं'' शब्द से आप क्या समझते हैं? समझाएँ। उदाहरण देकर इसके विभिन्न आयामों पर चर्चा करें।
2. 'स्वयं' को समझना महत्वपूर्ण क्यों है?

अध्याय
2

ख. स्वयं का विकास एवं विशेषताएँ

'स्वयं' का अर्थ यह नहीं है, जो जन्म से व्यक्ति में विद्यमान होता है अपितु जैसे-जैसे व्यक्ति बड़ा होता है, उसके 'स्वयं' का भी निर्माण तथा विकास होता जाता है। इस खंड में हम शैशवकाल, प्रारंभिक बाल्यावस्था, मध्यम बाल्यावस्था और किशोरावस्था में 'स्वयं' के विकास और विशेषताओं के बारे में पढ़ेंगे।

2ख.1 शैशवकाल के दौरान स्वयं

जन्म के समय हमें अपने विशिष्ट अस्तित्व की जानकारी नहीं होती। क्या आपको यह आश्चर्यजनक नहीं लगता? इसका अर्थ है कि शिशु यह महसूस नहीं कर पाता कि वह बाहर के संसार से अलग और भिन्न है – उसे अपने बारे में कोई जानकारी अथवा समझ और पहचान नहीं होती। इन सभी शब्दों से हमारा तात्पर्य 'स्वयं' के मानसिक निरूपण (मानसिक चित्र) से है। शिशु अपना हाथ अपने चेहरे के सामने लाता है लेकिन उसे यह पता नहीं होता कि वह उसका हाथ है और वह उन अन्य सभी लोगों और वस्तुओं जिन्हें वह अपने चारों ओर देखता है, से अलग है। 'स्वयं' की भावना शैशवकाल के दौरान क्रमिक रूप से उत्पन्न होती है और लगभग 18 महीने की आयु तक स्वयं की छवि की पहचान होने लगती है। 14-24 महीने के आयु-वर्ग के शिशुओं पर एक रुचिकर प्रयोग किया गया जो नीचे दिया गया है। आप भी इसे कर के देख सकते हैं।

क्रियाकलाप 1

शिशु के गाल पर लाल लिपस्टिक/रंग का बिंदु लगाएँ और फिर उसे शीशे के सामने लाएँ। यदि शिशु को स्वयं के बारे में जानकारी है तो वह स्वयं के गाल पर शीशे में लाल धब्बा देखकर गाल को छुएगा। यदि उसे स्वयं के बारे में जानकारी नहीं है तो वह शीशे में अपने प्रतिबिंब को छुएगा अथवा प्रतिबिंब के साथ खेलेगा जैसे कि वह कोई अन्य शिशु हो।

दूसरे वर्ष की दूसरी छ:माही में, शिशु व्यक्तिगत सर्वनामों–'मैं', 'मुझे' और 'मेरा' का उपयोग करने लगता है। वह किसी व्यक्ति अथवा वस्तु पर अधिकार जताने जैसे ''मेरा खिलौना'' अथवा ''मेरी माँ'' अपने बारे में अथवा जो कार्य वह कर रहा है उसे बताने अथवा अपने अनुभवों को बताने जैसे ''मैं खाना खा रहा हूँ'', के लिए इनका उपयोग करते हैं। इस समय तक शिशु स्वयं को तस्वीर में भी पहचानना शुरू कर देता है।

2ख.2 प्रारंभिक बाल्यावस्था के दौरान स्वयं

चूँकि 3 वर्ष का होने तक बच्चे प्राय: धाराप्रवाह बोलने लगते हैं, हमें बच्चे के 'स्वयं' की समझ के बारे में जानने के लिए केवल 'स्वयं' की पहचान पर आश्रित होने की आवश्यकता नहीं है। हम उन्हें 'स्वयं' के बारे में बातचीत में शामिल कर शाब्दिक साधनों का उपयोग कर सकते हैं। शोधकर्ताओं ने पाया है कि बच्चों के 'स्वयं' की समझ की निम्नलिखित पाँच मुख्य विशेषताएँ हैं–

1. वे 'स्वयं' को अन्य लोगों से अलग बताने के लिए 'स्वयं' का अथवा अपनी वस्तुओं के बाह्य विवरण का उपयोग करते हैं – वे विवरणात्मक शब्दों जैसे ''लंबा'' अथवा ''बड़ा'' का उपयोग कर सकते हैं अथवा जो कपड़े वे पहनते हैं और जो खिलौने अथवा वस्तुएँ उनके पास हैं उनको संदर्भित कर सकते हैं। उनका 'स्वयं' संबंधी विवरण संपूर्ण अर्थों में होता है – इसका अर्थ है कि वे 'स्वयं' की तुलना अन्य से नहीं करते। उदाहरण के लिए यह कहने के बजाय कि ''मैं किरण से लंबा हूँ।'' बच्चा कहेगा कि ''मैं लंबा हूँ।''
2. **वे जो कार्य कर सकते हैं** उसके अनुसार 'स्वयं' का विवरण देते हैं। उदाहरण के लिए खेल संबंधी कार्यकलापों के बारे में वह कहेगा कि– ''मैं साइकिल चला सकता हूँ'', ''मैं घर बना सकता हूँ'', ''मैं गिनती कर सकता हूँ'' आदि। अर्थात् उनकी 'स्वयं' की समझ के अंतर्गत 'स्वयं' का विवरण सक्रियता से शामिल होता है।
3. उनका स्वयं विवरण **निश्चित** होता है– अर्थात् वे 'स्वयं' को उन वस्तुओं के अनुसार परिभाषित करते हैं जो वे कर सकते हैं अथवा जो उन्हें दिखाई पड़ता है। जैसे; ''मेरे पास टेलीविज़न है।''
4. वे अकसर **स्वयं का आकलन वास्तविकता से अधिक** करते हैं। जैसे; एक बच्चा कह सकता है– ''मुझे कभी डर नहीं लगता'' अथवा ''मुझे सभी कविताएँ आती हैं'', लेकिन हो सकता है कि उसे पूरी तरह से याद न हो।
5. छोटे बच्चे यह पहचानने में भी **असक्षम** होते हैं कि उनमें भिन्न-भिन्न गुण हो सकते हैं – वे अलग-अलग समय में ''अच्छे'' व ''बुरे'', 'मतलबी' व 'आकर्षक' हो सकते हैं।

नीचे एक वयस्क और 3 वर्ष 8 माह की बालिका राधा के बीच हुई संक्षिप्त वार्ता दी गई है जिससे पता चलता है कि बच्चा स्वयं के बारे में क्या समझता है। यह वार्ता पूछे गए प्रश्नों और बच्चे द्वारा दिए गए उत्तरों के रूप में प्रस्तुत की गई है–

वयस्क अपने बारे में कुछ बताओ।

Adult Tell me something about yourself.

राधा मैं खाना खाती हूँ, मैं गाजर भी खाती हूँ, रोटी भी खाती हूँ। मैं बैट–बॉल खेलती हूँ। तीन दिन बाद मेरा जन्मदिन होगा क्योंकि जनवरी में मेरा जन्मदिन है। मैं लाइन में खड़ी होती हूँ। मैं मम्मी के साथ पढ़ती हूँ।

Radha I eat food, I eat carrots as well, I eat *chappati* also. I play with bat and ball. After three days is my birthday because my birthday is in January; I stand in a line; I study with my mother.

वयस्क अगर कोई तुमसे पूछे कि राधा कैसी बच्ची है, तो तुम क्या कहोगी?

Adult If someone asks you 'What is Radha like', what would you say?

राधा मैं अच्छी हूँ क्योंकि मैं लिखती भी हूँ। (वयस्क ने और बताने को कहा पर बच्ची ने कुछ नहीं कहा।)

Radha I am good because I write as well. (The adult asked her to explain more but she did not respond.)

वयस्क तुम्हारे मम्मी–पापा को तुम्हारे बारे में क्या अच्छा लगता है?

Adult What do your mummy-papa like about you?

राधा मैं अच्छी–अच्छी बातें करती हूँ और अच्छी–अच्छी कहानी सुनाती हूँ।

Radha I talk about nice things – I tell good stories.

वयस्क तुम्हें अपने बारे में क्या अच्छा लगता है ?

Adult What do you like about yourself?

राधा मुझे मेरे गुलाबी जूते अच्छे लगते हैं, बेबी अच्छा लगता है, अपनी सहेलियाँ अच्छी लगती हैं...

Radha I like my pink shoes, I like baby, I like my friends…?

वयस्क और बताओ...?

Adult Tell me more…?

राधा मुझे समझ नहीं आ रहा... मुझे अपने बारे में कुछ नहीं पता...।

Radha I don't understand… I don't know anything about myself…

2ख.3 मध्य बाल्यावस्था के दौरान स्वत्व

इस अवधि में बच्चे का स्वयं-मूल्यांकन अधिक जटिल हो जाता है। इस बढ़ती हुई जटिलता की विशेषता बताने वाले पाँच महत्वपूर्ण परिवर्तन हैं–

1. अब बच्चा अपनी **आंतरिक विशेषताओं** के संदर्भ में अपना विवरण देता है। अधिक संभव है कि बच्चा अपनी स्व-परिभाषा में अपनी मनोवैज्ञानिक विशेषताओं (जैसे प्राथमिकताएँ अथवा व्यक्तित्व संबंधी गुण) के बारे में अधिक बताए जैसे, नाम तथा शारीरिक विशेषताओं के बारे में न बताए। अतः बच्चा कह सकता है, "मैं मित्र बनाने में अच्छा हूँ", "मैं मेहनत करके अपना कार्य समय पर समाप्त कर सकता हूँ"।
2. बच्चे के विवरण में **सामाजिक विवरण और पहचान** शामिल होती है – वे जिस वर्ग से संबंध रखते हैं उसके संदर्भ में स्वयं को परिभाषित कर सकते हैं जैसे "मैं स्कूल के संगीत समूह में हूँ''।
3. बच्चे **सामाजिक तुलना** करने लगते हैं वे स्वयं को वास्तविक रूप की बजाय अन्य लोगों से तुलनात्मक रूप से भिन्न बताते हैं। अतः वे यह सोचना आरंभ कर देते हैं कि वे अन्य की तुलना में क्या कर सकते हैं जैसे ''मैं किरण से तेज़ दौड़ सकती हूँ''।
4. वे **वास्तविक स्वयं** और **आदर्श स्वयं** में अंतर करने लगते हैं। अतः वे अपनी वास्तविक क्षमताओं, जो उनके पास हैं, और जो उनके पास होनी चाहिए अथवा जो वे समझते हैं कि अधिक महत्वपूर्ण हैं, में अंतर कर सकते हैं।
5. पूर्व विद्यालयी बच्चे की तुलना में इस उम्र के बच्चे का स्वयं का विवरण अधिक वास्तविक हो जाता है। वस्तुओं और स्थितियों को अन्य लोगों के नज़रिए से देखने की क्षमता के विकसित हो जाने के कारण ऐसा हो सकता है।

2.4 किशोरावस्था के दौरान 'स्वयं'

किशोरावस्था में स्वयं की समझ अत्यधिक जटिल हो जाती है। 'स्वयं' की पहचान के विकास हेतु किशोरावस्था को एक नाजुक समय के रूप में देखा जाता है। इस अधिक जटिल 'स्वयं' की समझ की क्या विशेषताएँ हैं? आइए हम आरंभ में दो पहलुओं पर चर्चा करते हैं और तत्पश्चात् हम किशोरावस्था के स्वयं पर चर्चा करेंगे।

क्रियाकलाप 2

5 वर्ष, 9 वर्ष और 13 वर्ष के बच्चों के साथ मित्रता करें। उन्हें स्वयं के बारे में बताने को कहें और उनके विवरणों को नोट करें। क्या आप यह पाते हैं कि जो उन्होंने स्वयं के बारे में बताया है तथा जो आपने इस खंड में पढ़ा है, परस्पर मेल खाते हैं?

पहचान के विकास हेतु किशोरावस्था महत्वपूर्ण क्यों है?

एक प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक एरिक एच. एरिक्सन के अनुसार शैशवावस्था से वृद्धावस्था तक, हमारे विकास के प्रत्येक स्तर पर हमें कुछ सफलता पानी होती है जिनसे हम विकास के अगले चरण पर पहुँचते हैं। उदाहरण के लिए पश्च शैशवकाल तथा प्रारंभिक बाल्यावस्था (2-4 वर्ष की आयु के बीच) का कार्य आंतों व मूत्राशय की क्रियाओं पर नियंत्रण पाना है। अन्यथा बच्चे के लिए

अधिकांश सामाजिक और सामुदायिक कार्यकलापों में भाग लेना असंभव हो जाएगा। एरिक्सन के अनुसार पहचान की भावना का विकास करना अर्थात् किशोरावस्था के दौरान स्वयं को संतोषजनक रूप में दर्शाना एक मुख्य कार्य है।

किशोरावस्था पहचान के विकास हेतु महत्वपूर्ण अवस्था है क्योंकि इस समय स्वयं के विकास पर ध्यान अधिक केंद्रित रहता है। ऐसा माना गया है कि किशोरावस्था 'स्वयं' की पहचान बनाने के संदर्भ में कठिन समय होता है। इसके तीन मुख्य कारण हैं–

1. किशोरावस्था से पहले कभी भी व्यक्ति 'स्वयं' को जानने में इतना तल्लीन नहीं रहा। अर्थात् अब वह स्वयं को समझने के लिए अत्यधिक चिंतित होता है।
2. किशोरावस्था के अंतिम वर्षों में व्यक्ति 'स्वयं' और 'पहचान' की अपेक्षाकृत स्थाई भावना निर्मित कर लेता है और कह सकता है– ''मैं यह हूँ।''
3. यही वह समय भी है जब व्यक्ति की पहचान पर तीव्र शारीरिक परिवर्तनों और बदल रही सामाजिक माँगों का प्रभाव पड़ता है।

आइए इसे और विस्तार से समझते हैं

किशोर से अब अपेक्षा की जाती है कि वह बड़ों की तरह व्यवहार करे तथा परिवार, कार्य अथवा विवाह संबंधित उत्तरदायित्वों को निभाना आरंभ करे। निर्भर बच्चे से आत्मनिर्भर बच्चे में परिवर्तन विभिन्न संस्कृतियों में भिन्न-भिन्न रूप से होता है। सामान्यत: पश्चिमी संस्कृति में माता-पिता से 'अलग' होने (शारीरिक और मानसिक दोनों रूप से) की स्वतंत्रता पर ज़ोर दिया जाता है। दूसरी ओर, गैर-पश्चिमी संस्कृतियों में, जैसे भारतीय संस्कृति में परिवार में अंतर-निर्भरता पर अधिक ध्यान दिया जाता है। तथापि सभी संस्कृतियों में किशोरावस्था दुविधाओं और असहमतियों से भरी होती है। उदाहरण के लिए आमतौर पर देखा जाता है कि किशोर बच्चे की तरह समझे जाने पर विद्रोह कर उठता है लेकिन साथ ही अपने लिए वैसी ही सांत्वना भी पाना चाहता है जैसे कि एक बच्चा चाहता है। माता-पिता भी अकसर किशोर को 'बड़ों की तरह व्यवहार करने' के लिए कहते हैं लेकिन उनके अन्य क्रियाकलाप और व्यवहार किशोर को यह दर्शाते हैं कि वे नहीं समझते कि वह काफी बड़ा हो चुका है। यह व्यवहार, संस्कृति विशेष और परिवार की अपेक्षाओं के अनुसार लड़कों और लड़कियों के लिए भिन्न हो सकता है। अत: किशोर स्वयं परस्पर-विरोधी भावनाओं का अनुभव करता है और उसके चारों ओर संपर्क में आने वाले लोग भी उसे परस्पर विरोधी संदेश देते हैं और सामाजिक अपेक्षाएँ रखते हैं। आपने स्वयं भी अपने लिए ऐसा अनुभव किया होगा। उदाहरण के लिए परिवार के सदस्य आपसे चाहते हैं कि सामाजिक परिस्थितियों में जहाँ तक बातचीत करने या सजने-सँवरने का संबंध है, आप बड़ों की तरह व्यवहार करें लेकिन यह भी सोचते हैं कि परिवार के बजट पर चर्चा करने के लिए आप अभी काफी छोटे हैं।

चूँकि प्रत्येक व्यक्ति भिन्न होता है, इसलिए अलग-अलग परिस्थितियों में अलग-अलग ढंग से अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करता है। किशोरावस्था के दौरान पारिवारिक और सामाजिक स्रोतों की परस्पर विरोधी अपेक्षाएँ, व्यक्ति की स्वयं की बदलती हुई आवश्यकताएँ और परस्पर विरोधी संवेग, नए विकसित हो रहे स्वत्व के साथ एकीकरण में बाधा डाल सकते हैं। अत: किशोर अपनी 'भूमिका संबंधी उलझन' अथ 'पहचान संबंधी उलझन' का अनुभव कर सकता है। उनके व्यवहार में दिए गए

कार्य पर ध्यान केंद्रित करने में अक्षम होना, कार्य को समय पर आरंभ करने अथवा समाप्त करने में कठिनाई महसूस करना, समय-सारणी के अनुसार चलने में कठिनाई होना आदि का प्रदर्शन हो सकता हो। इस बात पर बल देना महत्वपूर्ण है कि किशोर का पहचान बनाना **विकास की प्रक्रिया का सामान्य हिस्सा** है – इस अवधि में किशोर जिन विरोधाभासी भावनाओं और संवेगों को अनुभव करता है, उसमें कुछ गलत नहीं है। पहचान के संकट की भावना अथवा 'भूमिका संबंधी उलझन' तब पैदा होती है जब किशोर यह महसूस करता है कि पहले की तुलना में अब जिन कार्यों को करने की और जिस तरह का व्यवहार करने की उससे अपेक्षा की जाती है, उनमें बहुत अंतर है। तथापि कई किशोर विशेषकर जो पारिवारिक व्यवसायों में लगे हैं, उनमें यह अलगाव की भावना उतनी स्पष्ट नहीं होती और इससे अधिक संवेगात्मक उथल-पुथल भी नहीं होती। उदाहरण के लिए यदि गाँव में एक किशोर कृषि कार्य में अपने परिवार का सहयोग कर रहा है तो 12 वर्ष से 16 वर्ष की आयु का होने पर भी उसकी भूमिका में अधिक परिवर्तन नहीं आता, सिवाए इसके कि उसको और अधिक ज़िम्मेदारियाँ सौंप दी जाती हैं।

किशोरावस्था में स्वयं की भावना की निम्न विशेषताएँ हैं–

1. किशोरावस्था के दौरान स्वयं का विवरण संक्षिप्त एवं केवल विचार रूप में ही होता है। अब किशोर ''लंबा'' अथवा ''बड़ा'' जैसे बाह्य संदर्भों में स्वयं का विवरण देने पर अधिक बल नहीं देते। वे अपने व्यक्तित्व को संक्षिप्त रूप से बताने या अपने आंतरिक गुणों पर अधिक बल देते हैं। अतः वे स्वयं का विवरण शांत, संवेदनशील, शांत दिमाग, बहादुर, भावुक अथवा सच्चा होने के रूप में दे सकते हैं।

2. किशोरावस्था के दौरान स्वयं में कई विरोधाभास होते हैं। अतः किशोर स्वयं के बारे में इस प्रकार बता सकता है कि, ''मैं शांत हूँ लेकिन सरलता से विचलित हो जाता हूँ'' अथवा ''मैं शांत हूँ और बातूनी भी''।
3. किशोर स्वयं की भावना में काफी उतार-चढ़ाव का अनुभव करता है। चूँकि किशोर भिन्न-भिन्न परिस्थितियों का अनुभव करते हैं और उन पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं, स्वयं के बारे में उनकी समझ स्थिति और समय के अनुसार बदलती रहती है।
4. किशोर के स्वयं में 'आदर्श स्वयं' और 'वास्तविक स्वयं' होता है। अब आदर्श स्वयं अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है। हममें से प्रत्येक को यह ज्ञान है कि हम आदर्श रूप में कैसा होना चाहते हैं? इसे 'आदर्श स्वयं' कहा जा सकता है जो हम विकसित करना चाहते हैं। उदाहरण के लिए एक लड़की जो वास्तव में बहुत छोटी है, लंबा होने की इच्छा रख सकती है।
5. किशोर, बच्चों की अपेक्षा स्वयं के बारे में अधिक सचेत होते हैं और अपने में ही मग्न रहते हैं। इससे उन्हें हमेशा 'मंच पर रहने' का आभास होता रहता है – ऐसा आभास कि उन्हें हर वक्त नोटिस किया जा रहा है। यही कारण है कि अधिकांश किशोर अपने बाह्य रूप रंग के प्रति अत्यधिक परेशान रहते हैं।

अब हम जीवन की कुछ अवस्थाओं में स्वयं की विभिन्न विशेषताओं के बारे में जानते हैं। लेकिन हम सबसे पहले 'स्वयं' की भावना का विकास कैसे करते हैं? किसी व्यक्ति की पहचान के विकास को क्या प्रभावित करता है? अगला अध्याय इसी पहलू पर केंद्रित है।

क्रियाकलाप 3

क्या आपको लगता है कि आप ऊपर दी गई किसी भी भावना अथवा विचार का अनुभव कर रहे हैं? क्या आपको लगता है कि आप इन भावनाओं को नियंत्रित कर सकते हैं अथवा आप इस संबंध में दुविधा में हैं? क्या आपने इन पहलुओं पर अपने मित्रों अथवा परिवार के सदस्यों से चर्चा की है? इस बारे में अपने मित्र से बात करें।

मुख्य शब्द

शैशवकाल, प्रारंभिक बाल्यावस्था, मध्य बाल्यावस्था, किशोरावस्था, पहचान का विकास, वास्तविक बनाम आदर्श स्वत्व।

समीक्षात्मक प्रश्न

1. उदाहरण देते हुए निम्नलिखित अवस्थाओं के दौरान 'स्वयं' की विशेषताएँ बताएँ?
   - शैशवकाल के दौरान
   - प्रारंभिक बाल्यावस्था के दौरान
   - मध्य बाल्यावस्था के दौरान
   - किशोरावस्था के दौरान
2. ''किशोरावस्था ऐसा समय है जब सभी किशोर पहचान के संकट का अनुभव करते हैं''। क्या आप इस कथन से सहमत हैं? अपने उत्तर के पक्ष में कारण दें।

अध्याय 2

ग. पहचान पर प्रभाव – स्व-बोध का विकास हम कैसे करते हैं?

आपने पढ़ा है कि हम आत्मत्व अथवा पहचान की भावना के साथ पैदा नहीं होते। फिर इसका विकास कैसे होता है? यह कैसे विकसित होती है और समय के साथ कैसे बदलती है? आप अपने अनुभवों से अपने बारे में जो सीखते हैं तथा अन्य लोग आपको आपके बारे में क्या बताते हैं, उसके परिणामस्वरूप 'स्वयं' का विकास होता है। प्रत्येक व्यक्ति के चारों ओर संबंधों का एक जाल है – यह संबंध परिवार, विद्यालय, कार्यस्थल और समुदाय में होते हैं। आपके आस-पास के लोगों से बातचीत के परिणामस्वरूप और आपके कार्यों के माध्यम से स्व-बोध का विकास होता है। इस प्रकार बहुत से लोग आपके 'स्वयं' के विकास में सहायक होते हैं और 'स्वयं' का निर्माण एक निरंतर गतिशील प्रक्रिया है। 'निर्माण' से तात्पर्य है कि 'स्वयं' का बोध जन्म से आप में नहीं होता लेकिन आप इसको सृजित करते हैं और जैसे-जैसे आपका विकास होता है इसका भी विकास होता जाता है।

क्रियाकलाप 1

अपना कोई विशिष्ट अनुभव याद करें। क्या अनुभव ने आपके अपने बारे में सोचने के तरीके को प्रभावित किया? नीचे दिए गए स्थान में अपनी टिप्पणियाँ लिखें।

....

....

....

....

....

....

आओ अब हम यह देखते हैं कि स्व-बोध का विकास आरंभिक वर्षों से कैसे होता है। प्रारंभिक दिनों में माता-पिता बच्चों को विभिन्न परिस्थितियों में एक विशेष नाम अथवा नामों से बुलाते हैं बच्चा स्वयं से जुड़े नामों के साथ खुद को जोड़ना आरंभ कर देता है। इसके साथ-साथ वे शीशे अथवा तस्वीर में भी बच्चे को देखकर उसे उसी के नाम से बुलाते हैं। वे 'तुम' और

'तुम्हारा' सर्वनामों का उपयोग करते हैं और जब वे बोलना आरंभ करते हैं तो 'मैं' और 'मेरा' बोलने लगते हैं। बच्चा अब समझने लगता है कि 'तुम' और 'तुम्हारा' अन्य व्यक्ति के लिए होता है। माता-पिता बच्चे के शरीर के विभिन्न अंगों के नाम बताते हुए और चिह्नित करते हुए विभिन्न प्रकार के 'शारीरिक खेल' खेलते हैं उसके बाद बच्चे से शरीर के अंगों के बारे में बताने के लिए कहते हैं। यह सब बच्चे को धीरे-धीरे स्वयं को अन्य लोगों से भिन्न और अलग समझने में सहायता करता है।

दूसरे, शैशवकाल में जैसे-जैसे बच्चे का विकास होता है वह यह समझने लगता है कि उसके क्रियाकलापों का पर्यावरण पर प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिए जब वह खिलौने को छूता है तो वह हिलता है। ऐसे अनुभवों से उसमें अपने चारों ओर के लोगों और वस्तुओं से भिन्न होने की भावना विकसित होती है। यदि आपको पहले की चर्चा याद हो तो, आप समझ जाएँगे कि यही समय (लगभग 18 महीने) है जब बच्चा अपने चेहरे पर लगे लाल धब्बे को पहचानने में सक्षम होता है और शीशे में अपने प्रतिबिंब को कोई अन्य बच्चा नहीं समझता।

तीसरे, जैसे–जैसे बच्चा बड़ा होता है और बोलने लगता है, माता-पिता बच्चे को स्वयं के बारे में बताने के लिए प्रोत्साहित करते हैं तथा कारण भी देने को कहते हैं। वे बच्चे से पूछते हैं– ''तुमने ऐसा क्यों किया?'' अथवा ''तुम्हें कैसा लग रहा है?'' इन प्रश्नों से बच्चे को यह समझने में मदद मिलती है कि उसे कैसा अनुभव हो रहा है अथवा कुछ कार्यों को करने का क्या कारण है? इस तरीके से वे बच्चे को स्वयं को पारिभाषित करने में सहायता करते हैं।

चौथे, बच्चा दिन भर में कई बार अपने आस-पास के लोगों से मिलता है और वस्तुओं को भी देखता है जिससे उसे अपनी क्षमताओं को पहचानने में सहायता मिलती है। लोग बच्चे को उसके व्यवहार और उसकी क्षमताओं के बारे में फीडबैक देते हैं। छह वर्ष का बच्चा जो भोजन करने के पश्चात् खाने के स्थान को साफ करने में मदद करता है, तो पिता यह कहते हैं – "आपने अच्छा काम किया। आप एक अच्छे लड़के/लड़की हो"। यह सब बच्चे के स्वयं के बारे में जो धारणाएँ हैं उनमें जुड़ता चला जाता है। अत: बच्चा अपनी देखभाल करने वालों और अन्य लोगों के साथ मौखिक-सामाजिक वार्ता के माध्यम से आत्मत्व और पहचान की भावना को निर्मित और पुन: निर्मित करता है।

स्व-बोध और पहचान की भावना विकसित करना

हममें से प्रत्येक की पहचान भिन्न होती है क्योंकि–

- हम में से प्रत्येक में (समरूप जुड़वाँ को छोड़कर) जीन का 'विशिष्ट समुच्चय' अलग होता है।
- हम में से प्रत्येक के अनुभव भिन्न होते हैं।
- हमारे अनुभव समान भी हों तो हम इन पर भिन्न तरीकों से अनुक्रिया करते हैं।

इस खंड में हम पहचान के निर्माण पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करेंगे। इन्हें निम्नलिखित रूप से वर्गीकृत किया जा सकता है–

- जैविक और शारीरिक परिवर्तन
- पारिवारिक और मित्रवत् संबंधों में सामाजिक, सांस्कृतिक संदर्भ
- भावात्मक परिवर्तन
- संज्ञानात्मक परिवर्तन

2ग.1 जैविक और शारीरिक परिवर्तन

किशोरावस्था के दौरान शरीर में कुछ सार्वभौमिक शारीरिक और जैविक परिवर्तन होते हैं जो एक विशेष क्रम में होते हैं। इन परिवर्तनों के परिणामस्वरूप यौन परिपक्वता आती है। यौन परिपक्वता की आयु को यौवनारम्भ (Puberty) कहा जाता है। अक्सर मासिक धर्म (पहला) को लड़कियों में यौन परिपक्वता का बिंदु माना जाता है। लड़कों के लिए यौवनारम्भ को चिह्नित करने वाली कोई विशिष्ट प्रक्रिया नहीं है। यद्यपि इसके लिए अक्सर जिस मानदंड का उपयोग किया जाता है वह है शुक्राणु (स्पर्मेटोज़ोआ) का उत्पादन। विभिन्न संस्कृतियों में यौवनारम्भ भिन्न-भिन्न औसत आयु में होता है। लड़कों व लड़कियों की लंबाई में एक वर्ष में होने वाली अधिकतम बढ़ोतरी को यौवनारम्भ का एक उपयोगी मानदंड माना गया है। लड़कियों में बढ़ोत्तरी मासिक धर्म से एकदम पहले अधिक तेज़ी से होती है और लड़कों में कुछ वयस्क विशेषताओं के विकास से पहले ऐसा होता है। वह अवधि जिसमें शारीरिक और जैविक परिवर्तनों के परिणामस्वरूप यौवनारम्भ होता है उसे यौवनावस्था कहा जाता है। अधिकांश लड़कियों में यह अवधि 11 वर्ष से 13 वर्ष के बीच होती है और लड़कों में 13 वर्ष से 15 वर्ष के बीच। यौवनावस्था के दौरान लड़कियों और लड़कों में होने वाले परिवर्तन जो विकास के सामान्य क्रम को दर्शाते हैं, की सूची निम्नवत् है–

लड़कियाँ	**लड़के**
स्तनों के आकार में आरंभिक वृद्धि	अंडकोष (वृषण) का विकास होना
बगलों और जाघों में बालों का आना	बगलों और जाघों में बालों का आना
अधिकतम वृद्धि की आयु	आवाज़ में आरंभिक परिवर्तन
मासिक धर्म	वीर्य (सीमन) का पहली बार स्खलन
	अधिकतम वृद्धि की आयु
	आवाज़ में स्पष्ट परिवर्तन
	दाढ़ी का आना

यौवनारम्भ के आरंभ होने पर शरीर में होने वाले शारीरिक परिवर्तन सार्वभौमिक हैं लेकिन प्रत्येक व्यक्ति पर इन परिवर्तनों का मनोवैज्ञानिक और सामाजिक प्रभाव भिन्न-भिन्न संस्कृति के अनुसार भिन्न होता है। यही नहीं एक ही संस्कृति के लोगों में भी प्रत्येक व्यक्ति पर प्रभाव भिन्न रूप से पड़ता है। हम इन पहलुओं पर चर्चा अगले दो शीर्षकों, ''सामाजिक सांस्कृतिक संदर्भ'' तथा ''भावनात्मक परिवर्तन'', के अंतर्गत करेंगे।

2ग.2 सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ

जैसा कि पहले बताया गया है कि शरीर में होने वाले शारीरिक परिवर्तन तथा बदलती सामाजिक अपेक्षाएँ ऐसे दो प्रमुख पहलू हैं जो किशोरावस्था के दौरान पहचान निर्माण की प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं। लेकिन पहचान निर्माण की प्रक्रिया पर शारीरिक और सामाजिक परिवर्तनों का प्रभाव सांस्कृतिक, सामाजिक तथा पारिवारिक संदर्भों में भिन्न-भिन्न होता है। इस खंड में पहले हम यह देखेंगे कि सांस्कृतिक और सामाजिक संदर्भ किशोरावस्था के विकास को कैसे प्रभावित करते हैं और तत्पश्चात् हम परिवार के प्रभाव के बारे में पढ़ेंगे।

किशोरावस्था के दौरान होने वाले शारीरिक परिवर्तनों के प्रति समाज के विभिन्न वर्गों की अलग-अलग अनुक्रिया हो सकती है। एक पारंपरिक भारतीय समाज में यौवनारम्भ के साथ ही लड़कियों पर कई प्रतिबंध लग जाते हैं जबकि लड़के पहले की तरह ही स्वतंत्र होते हैं। मनोरंजन अथवा कार्य के कुछ क्षेत्र लड़कियों के लिए उचित नहीं माने जाते। पारंपरिक समुदाय की लड़की के 'स्वयं' और 'पहचान' के घटक शहरी क्षेत्रों में रहने वाली लड़की से एकदम अलग होंगे।

अब हम अपनी संस्कृति और पश्चिमी संस्कृति की तुलना करते हैं। अधिकांश पश्चिमी संस्कृतियों (जैसे अमेरिका और ब्रिटेन) में किशोरों से पूर्णत: आत्मनिर्भर होने की अपेक्षा की जाती है– कई मामलों में तो उनसे अपेक्षा की जाती है वे परिवार से अलग जाकर अपना घर बसाएँ। भारतीय संदर्भ में, अधिकांश किशोर अपने माता-पिता पर काफी हद तक निर्भर होते हैं जैसा कि उनसे अपेक्षा भी की जाती है और परिवार हमेशा उन पर नियंत्रण बनाए रखते हैं। भारत में जहाँ अधिकांश किशोर विशेषकर ग्रामीण और जनजातीय क्षेत्रों में, परिवार की आय में योगदान करना आरंभ कर देते हैं। इस प्रकार वे वयस्क की भूमिका निभाते हैं, पर फिर भी परिवार से अलग नहीं होते। बल्कि उनके धनार्जन के प्रयास का उद्देश्य अक्सर परिवार के सदस्यों के कल्याण से जुड़ा होता है। इन दोनों सांस्कृतिक परिवेशों में किशोर के 'स्वयं' का विकास पूर्णत: भिन्न होगा। भारत में भी, विभिन्न समुदायों में किशोरावस्था के अनुभव अधिकांशत: भिन्न होंगे। पारंपरिक समुदायों और क्षेत्रों जहाँ अभी प्रौद्योगिकी का विकास नहीं हुआ है और जहाँ व्यावसायिक अवसर तथा वैकल्पिक जीवन शैली के विकल्प सीमित हैं, वहाँ पर बच्चों को पारंपरिक पारिवारिक व्यवसायों जैसे बुनाई आदि में किशोरावस्था तक प्रशिक्षित कर दिया जाता है। अत: ये किशोर वयस्क भूमिका हेतु तैयार होते हैं - अर्थात् इन किशोरों को वयस्कों के समान ऐसे व्यक्ति के रूप में देखा जाता है जो व्यवसाय आरंभ करने, विवाह करने और बच्चों का उत्तरदायित्व संभालने के लिए तैयार होते हैं। अत: इन समुदायों में किशोर की पहचान पारिवारिक स्रोतों से अधिक प्रभावित होगी। किशोर का बड़ों से मतभेद भी नहीं होता क्योंकि वह मुख्यत: वही कर रहा है जिसकी उससे अपेक्षा है। इसके परिणामस्वरूप 'स्वयं' की भावना के विकास के दौरान भ्रम और संदेह होने की संभावना कम हो जाती है। दूसरी ओर ऐसे समुदायों और परिवारों में जहाँ पर किशोरों के लिए कई प्रकार के व्यावसायिक विकल्प होते हैं और व्यक्ति के पास प्रौद्योगिकी के कारण कई अनुभव और विकल्प उपलब्ध होते हैं, वहाँ किशोर को चयनित व्यवसाय हेतु स्वयं को तैयार करने के लिए लंबी प्रशिक्षण अवधि की आवश्यकता होती है। इस अवधि में किशोर अपने अभिभावकों पर ही निर्भर रहता है। इस प्रकार जब प्रशिक्षण की अवधि बढ़ जाती है किशोरावस्था का काल बढ़ जाता है और वयस्कता देरी से आती है। इसके साथ ही, विकल्पों में बढ़ोतरी और वैकल्पिक जीवनशैली के प्रभाव के कारण किशोर का अपने अभिभावकों तथा समाज के अन्य प्रमुख व्यक्तियों से विवाद हो सकता है।

पारंपरिक संस्कृति और पश्चिमी संस्कृति में 'पहचान विकास' के भिन्न होने की संभावना का एक कारण और भी है। पारंपरिक भारतीय समुदायों में किशोरों में स्वयं को स्वतंत्र तथा आत्मनिर्भर रूप से दर्शाना और अपने बारे में बात करने का विचार एक सामान्य क्रियाकलाप नहीं है। यही नहीं इस प्रकार की प्रवृत्ति को अकसर न तो बढ़ावा ही दिया जाता है और न ही सहन किया जाता है। कई भारतीय स्वयं को मुख्यत: अपनी एक या दूसरी भूमिका जैसे– पुत्र/पुत्री, माता/पिता, बहन/भाई के रूप में परिभाषित करते हैं। अन्य शब्दों में, वे अक्सर स्वयं के बारे में अपने परिवार और समुदाय के संदर्भ में जैसे 'मैं' की बजाय 'हम' के रूप में बात करते हैं।

उदाहरण के लिए एक किशोर लड़की से विवाह के बारे में उसकी राय पूछने पर वह यह कहने कि, ''मैं चाहूँगी कि मेरे माता-पिता मेरी शादी तय करें'' की बजाय यह कहेगी कि, ''हमारे परिवार में माता-पिता शादी तय करते हैं।'' अतः हम यह देख सकते हैं कि स्व-बोध के निर्माण में सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ कितना महत्वपूर्ण है। यद्यपि ये सांस्कृतिक प्रभाव भी प्रत्येक परिवार और प्रत्येक व्यक्ति के साथ भिन्न हो जाते हैं।

संस्कृति और समाज किशोर की पहचान के विकास को कैसे प्रभावित करते हैं, इस पर चर्चा करने के बाद आइए अब हम इस बारे में पढ़ते हैं कि परिवार पहचान-बोध के विकास को कैसे प्रभावित कर सकता है। किशोरों के पहचान निर्माण को उन पारिवारिक संबंधों से प्रोत्साहन मिलता है जहाँ स्वयं की राय बनाने हेतु प्रोत्साहित किया जाता है और जहाँ परिवार के सदस्यों में सुरक्षित संबंध होते हैं इसके कारण किशोर को अपने बढ़ते हुए सामाजिक दायरे को जानने के लिए एक सुरक्षित आधार मिलता है। यह भी पाया गया है कि सुदृढ़ और स्नेहमय पालन-पोषण से पहचान का स्वस्थ विकास होता है। 'स्नेहमय' पालन-पोषण का अर्थ है कि अभिभावक उत्साही, स्नेही और बच्चे के प्रयासों और उपलब्धियों का समर्थन करने वाले हों। वे अक्सर बच्चे की प्रशंसा करते हैं, उसके कार्यकलापों के प्रति उत्साह दिखाते हैं, उसकी भावनाओं के प्रति संवेदनपूर्ण ढंग से प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं और उसके व्यक्तित्व और उसकी राय को समझते हैं। तथापि ऐसे माता-पिता दृढ़ अनुशासन वाले होते हैं। इस प्रकार के पालन-पोषण से बच्चों में स्वतंत्रता और आत्मनिर्भरता आती है।

किशोरावस्था वह अवधि है जिसमें बढ़ते हुए बालक को अपनी मित्रमंडली के सहयोग और स्वीकार्यता की अत्यधिक आवश्यकता होती है। कई बार ऐसा भी होता है कि माता-पिता और मित्रों के मूल्य एक-दूसरे से अलग हों। ऐसे में किशोर का अपने मित्रों की ओर अधिक झुकाव हो सकता है। इसके कारण माता-पिता और बच्चे के संबंधों में तालमेल नहीं रह पाता। मित्रों के दबाव के अनुकूल होना सकारात्मक तथा नकारात्मक दोनों ही हो सकता है। नकारात्मक प्रभाव तब दिखाई पड़ते हैं जब किशोर हानिकारक आचरण जैसे धूम्रपान करना, ड्रग या एल्कोहल लेना अथवा दूसरों को धमकाना इत्यादि में लिप्त हो जाता है। लेकिन, अक्सर मित्र और माता-पिता एक-दूसरे के पूरक कार्य करते हैं और किशोरों की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। यह देखा गया है कि किशोर की पहचान के विकास के लिए परिवार का ऐसा वातावरण होना महत्वपूर्ण है जो वैयक्तिकता और संबंधों को बनाना दोनों को बढ़ावा देता है। वैयक्तिकता से तात्पर्य है कि अपनी राय बनाने की क्षमता रखना तथा उसे व्यक्त करने के अवसर भी मिलना। संबंध बनाने का अर्थ है, अन्य लोगों की राय के प्रति संवेदनशील होना, उसका सम्मान करना और उसके प्रति उदार होना।

2ग.3 भावात्मक परिवर्तन

किशोर विकास के दौरान कई भावात्मक परिवर्तनों का अनुभव करता है। इनमें से कई परिवर्तन किशोर में हो रहे जैविक और शारीरिक परिवर्तनों के कारण होते हैं। यह सच है कि किशोर अपने शारीरिक रूप को लेकर अधिक चिंतामग्न रहते हैं। उन्हें लगता है कि दूसरे लोग उनके शरीर और व्यवहार के प्रत्येक पहलू को देख रहे हैं। एक युवा जिसके चेहरे पर मुंहासे हैं, उसे लगता

unit1_30june_asCorrected.indd 22 11-09-2017 12:06:38 PM

है कि सब लोग सबसे पहले उसी को देखते हैं फिर भी शारीरिक परिवर्तनों के प्रति सभी–किशोर अलग–अलग तरीके से प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं। एक लड़का जिसके चेहरे पर उसकी उम्र के अन्य लड़कों की तुलना में पर्याप्त बाल नहीं हैं, उसे यह अजीब–सा लग सकता है। तथापि चेहरे पर बाल न होना किसी अन्य लड़के को परेशान न करे, ऐसा भी हो सकता है। शारीरिक विकास के प्रति गर्व अथवा सहज भाव रखने से किशोरों के स्व–बोध पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। दूसरी ओर, यदि किशोर इस बात से कि वह कैसा दिखाई देता है, आवश्यकता से अधिक असंतुष्ट है तो वह अपने व्यक्तित्व के अन्य पहलुओं, जैसे कार्य, पढ़ाई आदि पर ध्यान केंद्रित नहीं कर पाता है। इससे विद्यालय में उसके कार्य निष्पादन में गिरावट आ सकती है और यह उसकी स्वयं के प्रति धारणा अथवा स्वाभिमान को कम करती है। अपने प्रति नकारात्मक धारणा रखने से व्यक्ति असुरक्षित महसूस करता है और उसमें शरीर के प्रति नकारात्मक भावनाएँ उत्पन्न होती हैं। संभव है कि शारीरिक अशक्तता वाला किशोर स्वयं को अन्य से कम समझे जबकि एक सुगठित किशोरवय लड़का चिंतित और अपूर्ण महसूस करे क्योंकि उसे लगता है कि उसका शरीर 'अच्छा' नहीं है।

किशोरों की मन:स्थिति भी बदलती रहती है। उदाहरणत: कभी परिवार के सदस्यों और मित्रों के साथ रहने की इच्छा रखना और कभी बिल्कुल अकेले रहना। कभी उसे अचानक बेहद तेज़ क्रोध भी आ सकता है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि किशोर विभिन्न स्तरों पर स्वयं में हो रहे विभिन्न प्रकार के परिवर्तनों को जानने का और समझने का प्रयास कर रहा होता है।

2ग.4 संज्ञानात्मक परिवर्तन

आप इकाई 3 – ''बाल्यावस्था'' में शैशवावस्था से किशोरावस्था तक सोच (बोध) में होने वाले परिवर्तनों के बारे में विस्तार से पढ़ेंगे। अभी हम उन संज्ञानात्मक परिवर्तनों का संक्षिप्त ब्यौरा दे रहे हैं जिनका स्व–बोध के विकास पर प्रभाव पड़ता है।

बाल्यावस्था के आरंभिक वर्षों में बच्चे का विकास एक ऐसे व्यक्ति जिसे अलग पहचान के बारे में पता नहीं होता अथवा जिसमें व्यक्तिगत भावना नहीं होती, से ऐसे व्यक्ति में होता है जो 'स्वयं' की निश्चित और सही संदर्भों में व्याख्या कर सकता है। मध्य बाल्यावस्था में भी स्वयं–विवरण सही–सही होता है, अंतर यह होता है कि इस अवस्था में यह विवरण तुलनात्मक भी होता है। जब तक बच्चा 11 वर्ष का होता है, स्वयं-विवरण काफी वास्तविक हो जाता है और बच्चा 'वास्तविक' और 'आदर्श' स्वयं में अंतर करने में सक्षम हो जाता है।

किशोरावस्था के दौरान एक ज़बर्दस्त परिवर्तन यह होता है कि किशोर अमूर्त रूप से सोचने लगता है अर्थात् वे वर्तमान से तथा जो वह देखते और अनुभव करते हैं उससे अधिक आगे भी सोच सकते हैं। यही नहीं जैसे–जैसे सोच लचीली होती जाती है वे परिकल्पित स्थितियों के बारे में भी सोच सकते हैं। अन्य शब्दों में वे विभिन्न संभावनाओं और उनके परिणामों के बारे में सोच सकते हैं और इसके लिए यह आवश्यक भी नहीं कि वे उस स्थिति से होकर गुजरें अथवा किसी परिणाम को झेलें। पहचान निर्माण का आशय यह है कि किशोर कल्पनात्मक ढंग से अपने वर्तमान को अपने लिए चयनित कल्पित भविष्य के साथ जोड़ सकता है। उदाहरण के लिए किशोर उन संभावित जीविकाओं (कैरियर) के बारे में सोच सकता है जो वह वयस्क के रूप में अपना सकता

है तथा जो उसकी स्थिति और मिजाज़ के अनुकूल हो। तद्नुसार वह अपने अध्ययन की वर्तमान दिशा निर्धारित कर सकता है।

अत:, किशोरावस्था, पहचान विकास का महत्वपूर्ण चरण है। सच तो यह है कि, किशोरावस्था विकास की वह महत्वपूर्ण अवधि है, जिसमें कई परिवर्तन होते हैं और कई अवसर आते हैं। यदि किशोर स्वस्थ है तो वह परिवर्तनों का सामना बेहतर ढंग से कर सकता है और अपनी पूर्ण क्षमता को महसूस कर सकता है। समुचित भोजन और पोषण अच्छे स्वास्थ्य के प्रमुख तत्त्व हैं। अगले अध्याय में किशोरावस्था के दौरान भोजन, पोषण स्वास्थ्य और स्वास्थ्य के रखरखाव के संबंध में चर्चा की गई है।

मुख्य शब्द

यौवनारंभ, यौवनावस्था, मासिक धर्म, व्यक्तित्व, मित्रमंडली दबाव।

समीक्षात्मक प्रश्न

1. यौवनारंभ और यौवनावस्था की संकल्पनाओं पर चर्चा करें। यौवनारंभ के दौरान लड़कियों और लड़कों में होने वाले प्रमुख शारीरिक और जैविक परिवर्तनों का विवरण दें।
2. एक किशोर के व्यक्तित्व को आकार देने में परिवार की क्या भूमिका है?
3. संस्कृति एक किशोर की पहचान को कितना प्रभावित करती है? उदाहरण सहित व्याख्या करें।
4. किशोरावस्था के दौरान होने वाले प्रमुख भावात्मक और संज्ञानात्मक परिवर्तन कौन से हैं?

■ प्रायोगिक कार्य 1

'स्वयं' का विकास और विशेषताएँ

थीम व्यक्ति के शारीरिक 'स्वयं' का अध्ययन करना

कार्य
1. लंबाई, वजन, कूल्हे का आकार, कमर की गोलाई, छाती के नाप को रिकॉर्ड करें।
2. मासिक धर्म की (लड़कियों में) और दाढ़ी निकलने तथा आवाज़ में परिवर्तन आने की (लड़कों में) आयु को रिकॉर्ड करें।
3. बालों तथा आँखों के रंग को रिकॉर्ड करें।

प्रयोग का उद्देश्य– आपने किशोरावस्था में शारीरिक वृद्धि और विकास के बारे में पढ़ा है। इस प्रयोग से आपको अपने शारीरिक 'स्वयं' को बेहतर ढंग से समझने में सहायता मिलेगी और जब आप अपने क्षेत्र के अन्य किशोरों से अपने आँकड़ों की तुलना करेंगे तो आपको अपने क्षेत्र में किशोरों की वृद्धि और विकास की औसत दर के बारे में जानने में सहायता भी मिलेगी। उपर्युक्त कार्य 1 में बताया गया मापन आपके लिए वस्त्रों का नाप जानने के लिए भी महत्वपूर्ण है।

क्रिया विधि– उपर्युक्त कार्य 1 में बताए अनुसार अपना स्वयं का माप लें। आप अपने मित्र का और वह आपका माप भी ले सकता है। निम्नलिखित माप बताए गए तरीके के अनुसार लिए जा सकते हैं–

- कूल्हे का आकार – कूल्हे के सबसे चौड़े भाग के चारों ओर माप-टेप घुमाएँ। शरीर और टेप के बीच दो अंगुल की दूरी रखते हुए टेप से मापें।
- छाती की गोलाई – छाती के सबसे उभरे हुए भाग पर टेप रखते हुए चारों ओर घुमाकर माप लें। टेप मज़बूती से पकड़ें, लेकिन कसकर नहीं।
- कमर की गोलाई – कमर के चारों ओर टेप रखें और यहाँ शरीर के सबसे कम चौड़े भाग पर इसे जाने दें (यह कमर है)। टेप और शरीर के बीच एक उँगली रखते हुए माप लें।
- गर्दन की गोलाई – स्थिर मापक को गर्दन पर रखें और इसे धीरे-धीरे नीचे ले जाएँ जब तक कि निचला सिरा गर्दन के निचले हिस्से पर बैठ नहीं जाता। यहाँ गर्दन का माप लिया जाता है।
- पृष्ठ भाग– यह कंधे की अंस फलक के पार्श्विक सिरों के बीच का माप है (अंस पटल)। कमर के माप से 10–12 सेमी. नीचे सबसे उभरे भाग का एक और माप लें। यह आपके पृष्ठ भाग का सबसे चौड़ा हिस्सा है।

निम्नलिखित सारणी में कार्य 1, 2, और 3 के अनुसार जानकारी नोट करें –

आपका नाम	....	आयु	....
जेंडर	....	बालों का रंग	....
आँखों का रंग	....	मासिक धर्म की प्रारंभ	
दाढ़ी आने एवं/आवाज़ में	....	की आयु	....
परिवर्तन होने पर आयु		वजन	....
लंबाई	....	छाती का माप	....
कूल्हे का माप	....	गर्दन की गोलाई	....
कमर की गोलाई	....	पृष्ठ भाग के दो माप	....

अब 10-10 बच्चों के समूह बनाएँ और सभी व्यक्तिगत आँकड़ों को एक साथ मिला दें।

1. नोट करें कि आपके समूह में शरीर के उक्त मापों में से प्रत्येक की परास उदाहरणतः क्या है। जैसे आपके समूह में वजन.............. किग्रा. से.............. किग्रा. तक है।
2. मासिक धर्म की आयु, दाढ़ी उग आने और आवाज़ में परिवर्तन होने की आयु की परास भी नोट करें।
3. अपने वस्त्रों के माप के साथ अपने माप की तुलना करें। अपने द्वारा खरीदे गए रेडीमेड वस्त्रों के माप का अपने माप के साथ परस्पर संबंध बताएँ।

प्रयोग 2

थीम स्वयं द्वारा अनुभव किए गए मनोभाव (संवेग)

कार्य
1. दिनभर में अपने द्वारा अनुभव किए गए मनोभावों को रिकॉर्ड करना।
2. मनोभावों के कारण बताना।
3. उन पर नियंत्रण के तरीके खोजना।

उद्देश्य– प्रत्येक दिन हमें अलग-अलग अनुभव होते हैं और यह स्थितियों के प्रति हमारी अनुक्रिया करने के तरीके को प्रभावित करते हैं। अपने मनोभावों के प्रति जागरूक होने और इन भावनाओं के होने के कारणों को जानने से हमें उन्हें नियंत्रित करने और स्थितियों के अनुकूल प्रतिक्रिया करने में सहायता मिल सकती है। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर यह प्रयोग तैयार किया गया है।

क्रिया विधि– कोई एक दिन चुन लें और उस दिन सुबह से ही अनुभव किए गए अपने मनोभावों (संवेगों) को ध्यान में रखें। अपने साथ एक नोट पैड और पेन रखें और संवेग को नोट करें। अब संवेग की संदर्भित स्थिति तथा उसके कारण को समझने के तुरंत बाद ही नोट कर लें। इन सब को नोट करने के लिए आप निम्नवत् सारणी का उपयोग कर सकते हैं।

दिन का समय				
संवेग				
स्थिति/संदर्भ				
संवेग अनुभव करने पर आपकी प्रतिक्रिया				
विशेष टिप्पणी अथवा प्रेक्षण जो आप नोट करना चाहें				

4-5 छात्रों के समूह बनाएँ। अपने समूह में स्वयं द्वारा नोट की गई बातों की अन्य समूहों के छात्रों की बातों से तुलना करें। तथा निम्न पर चर्चा करें–

1. क्या समूह के अन्य सदस्यों द्वारा भी समान संवेगों को महसूस किया गया?
2. विभिन्न स्थितियों में समान विशेषताएँ जिनके कारण समूह के सदस्यों ने इन संवेगों को महसूस किया।
3. क्या प्रत्येक सदस्य ने संवेगों को समुचित ढंग से नियंत्रित किया?
4. क्या इन संवेगों को नियंत्रित करने के लिए अन्य विकल्प भी हो सकते थे?

अध्याय
3

भोजन, पोषण, स्वास्थ्य और स्वस्थता

उद्देश्य

इस अध्याय को पूरा करने के बाद शिक्षार्थी सक्षम होंगे–

- भोजन, पोषण, पोषक तत्त्व, स्वास्थ्य, स्वस्थता जैसे शब्दों की परिभाषा तथा स्वास्थ्य को बनाए रखने में भोजन और पोषण की भूमिका को समझने में,
- संतुलित आहार क्या है तथा आहार तैयार करने और उसे ग्रहण करने में किस प्रकार इस संकल्पना का प्रयोग किया जा सकता है, यह जानने में,
- आहार की निर्धारित मात्रा (आर.डी.ए.) की परिभाषा और आहार संबंधी आवश्यकताओं और आर.डी.ए. के बीच के अंतर को समझने में,
- भोजन को उपयुक्त वर्गों में वर्गीकृत करने का आधार समझने में,
- किशोरावस्था में भोजन संबंधी आदतों को प्रभावित करने वाले कारकों का विश्लेषण, करने में, और
- खान–पान संबंधी विकृतियों के कारण, लक्षण और पोषण संबंधी हस्तक्षेपों की पहचान करने में।

3.1 परिचय

किशोरावस्था के आरंभ के साथ ही कई महत्वपूर्ण परिवर्तन होते हैं। विकास की गति आकस्मिक रूप से तीव्र हो जाती है। चूँकि यह विकास हार्मोनों की गतिविधि के कारण होता है जो कि शरीर के प्रत्येक अंग को प्रभावित करते हैं अत: ऐसे समय में पौष्टिक भोजन खाना अति महत्वपूर्ण है। संपूर्ण बाल्यावस्था में पोषक तत्त्वों की आवश्यकता बढ़ती रहती है, किशोरावस्था में यह शीर्ष पर होती है तत्पश्चात् किशोर के वयस्क होने पर उतनी ही रहती है अथवा उससे कम भी हो सकती है। पुरानी कहावत ''जैसा अन्न वैसा तन'' अर्थात् आप वैसे ही बनेंगे जैसा आहार लेंगे, सही प्रतीत होती है। हम विभिन्न प्रकार का भोजन जैसे दाल, रोटी, डबलरोटी, चावल, सब्जियाँ, दूध, लस्सी इत्यादि लेते हैं। ये भिन्न प्रकार के भोजन हमें स्वस्थ और स्फूर्त रखने के लिए पोषक तत्त्व प्रदान करते हैं। यह जानना महत्वपूर्ण है कि स्वस्थ रहने के लिए किस प्रकार का भोजन खाना चाहिए भोजन और पोषक तत्त्वों के हमारे स्वास्थ्य पर पड़ने-वाले प्रभाव का विज्ञान ''पोषण'' कहलाता है।

वास्तव में पोषण और स्वास्थ्य एक सिक्के के दो पहलू हैं। अतः इन्हें एक-दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। स्वास्थ्य, काफी हद तक पोषण पर निर्भर करता है और पोषण जो भोजन हम खाते हैं उस पर निर्भर करता है। अतः स्वास्थ्य और स्वास्थ्य के रख-रखाव का एकमात्र महत्वपूर्ण कारक भोजन ही है।

आइए अब भोजन, पोषण, स्वास्थ्य और स्वास्थ्य के रख-रखाव को परिभाषित करते हैं–

- **भोजन** वह ठोस अथवा द्रव पदार्थ है जो भीतर निगलने, पचाने और स्वांगीकृत या अवशोषित होने के पश्चात् शरीर को पोषक तत्त्व जैसे अनिवार्य पदार्थ प्रदान करता है और इसे स्वस्थ रखता है। यह जीवन की मूल आवश्यकता है। भोजन ऊर्जा प्रदान करता है, शारीरिक विकास में सहायक होता है तथा ऊत्तकों और अंगों की मरम्मत करता है। यह शरीर की रोगों से रक्षा भी करता है तथा विभिन्न शारीरिक क्रियाओं में मदद करता है।
- **पोषण** एक विज्ञान है। इस विज्ञान में भोजन, पोषक तत्त्वों और इसमें समाविष्ट अन्य पदार्थों का विवरण शामिल है। इन्हीं पदार्थों से हमारे शरीर के भीतर अनेक कार्य जैसे अन्तर्ग्रहण, पाचन, अवशोषण, उपापचय और उत्सर्जन आदि पूरे होते हैं। हालांकि यह शारीरिक आयामों को दर्शाता है परंतु पोषण के सामाजिक, मनोवैज्ञानिक तथा आर्थिक पहलू भी हैं।
- **पोषक तत्त्व** भोजन में विद्यमान वे घटक होते हैं जिनकी शरीर को पर्याप्त मात्रा में आवश्यकता होती है। इनमें कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, खनिज, विटामिन, जल तथा रेशा (फाइबर) शामिल हैं। हमें स्वस्थ रहने के लिए सभी पोषक तत्त्वों की आवश्यकता होती है। अधिकांश खाद्य पदार्थों में एक से अधिक पोषक तत्त्व होते हैं, जैसे– दूध में प्रोटीन, वसा इत्यादि होते हैं। पोषक तत्त्वों को हमारे दैनिक उपभोग के लिए आवश्यक मात्रा के आधार पर वृहत् पोषकों (मैक्रोन्यूट्रिएंट्स) तथा सूक्ष्म पोषकों (माइक्रोन्यूट्रिएंट्स) में वर्गीकृत किया जा सकता है। अगले पृष्ठ पर वर्णित चित्र वृहत्पोषक तत्त्वों और सूक्ष्मपोषक तत्त्वों में अंतर दर्शाता है –

3.2 संतुलित आहार

संतुलित आहार वह है जिसमें विभिन्न प्रकार के वे सभी खाद्य पदार्थ शामिल होते हैं जिनमें दैनिक आवश्यकता के सभी अनिवार्य पोषक तत्त्व जैसे प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, विटामिन, खनिज, जल तथा रेशे समुचित मात्रा और सही अनुपात में विद्यमान होते हैं। संतुलित आहार अच्छे स्वास्थ्य के लिए और स्वास्थ्य को बनाए रखने में सहायक होता है इसके अतिरिक्त यह ऐसी लघु अवधियों, जब आहार की आपूर्ति नहीं हो पाती, का सामना करने के लिए पोषक तत्त्वों की अतिरिक्त सुरक्षा मात्रा अथवा भंडारण भी उपलब्ध कराता है।

अतिरिक्त सुरक्षा मात्रा उपवास के दिनों में अथवा दैनिक आहार में कुछ पोषक तत्त्वों की अल्पकालिक कमी को पूरा करती है। यदि संतुलित आहार व्यक्ति की संस्तुत आहारीय मात्रा (आर.डी.ए. – रिकमैंडिड डायटरी एलाउंसेस) की पूर्ति करता है तो अतिरिक्त मात्रा भी इसमें पहले से शामिल होती है क्योंकि आर.डी.ए. अतिरिक्त मात्रा को ध्यान में रखकर तैयार किया जाता है।

निर्धारित आहार संबंधी मात्रा (आर.डी.ए.) = **आवश्यकता** + **अतिरिक्त सुरक्षा मात्रा**

संतुलित आहार में निम्न बातों पर ध्यान दिया जाता है–

1. इसमें विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थ शामिल होते हैं।
2. इसमें सभी पोषक तत्त्व 'आर. डी. ए.' के अनुसार होते हैं।
3. इसमें सही अनुपात में पोषक तत्त्व शामिल होते हैं।
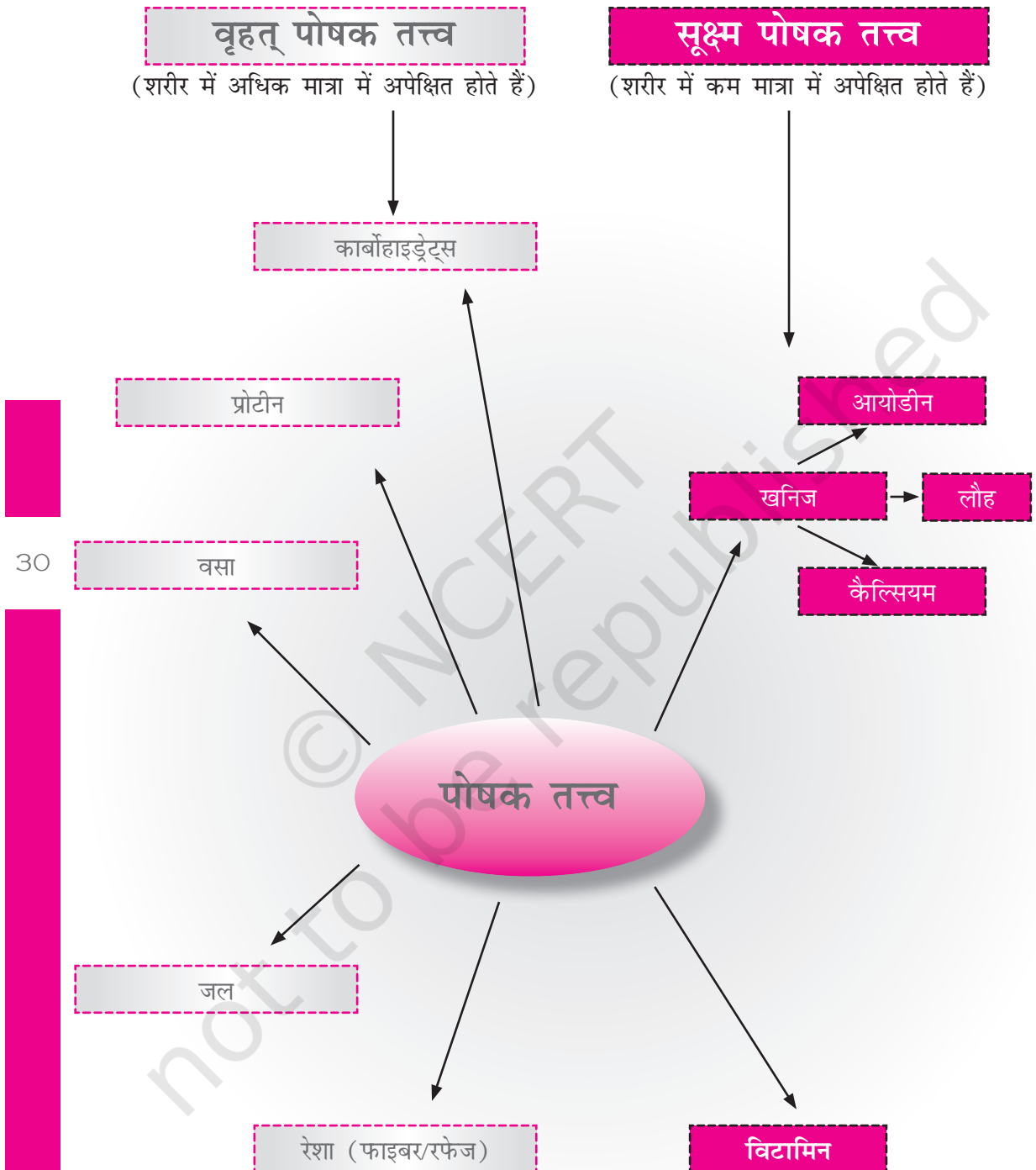
चित्र 1 – हमारे भोजन के आधारभूत पोषक तत्त्व

4. यह पोषक तत्त्वों हेतु अतिरिक्त सुरक्षा मात्रा उपलब्ध कराते हैं।
5. अच्छे स्वास्थ्य को बनाए और बचाए रखने में मदद करते हैं।
6. लंबाई के अनुपात में अपेक्षित शारीरिक वजन बनाए रखते हैं।

3.3 स्वास्थ्य और स्वस्थता

विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यू. एच. ओ.) के अनुसार "स्वास्थ्य शारीरिक, भावनात्मक और सामाजिक रूप से पूरी तरह अच्छा होने की स्थिति है, यह केवल रोगों अथवा अशक्तता के न होने की स्थिति नहीं है।" इस परिभाषा में 1948 से कोई परिवर्तन नहीं हुआ है।

हम सभी अच्छा स्वास्थ्य बनाए रखना चाहते हैं अर्थात् जिसमें शारीरिक, सामाजिक और मानसिक स्वास्थ्य सभी शामिल हों। अच्छे स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए आहार में अनिवार्य पोषक तत्त्वों की पर्याप्त मात्रा लेना आवश्यक है।

शारीरिक स्वास्थ्य के बारे में समझना शायद सबसे अधिक आसान है। मानसिक स्वास्थ्य का अर्थ है **भावनात्मक और मनोवैज्ञानिक रूप से स्वस्थ होने की वह स्थिति जिसमें व्यक्ति अपनी संज्ञानात्मक और भावनात्मक क्षमताओं का उपयोग करने, समाज में कार्य करने और जीवन की रोज़मर्रा की सामान्य माँगों की पूर्ति करने में सक्षम होता है।** दूसरे शब्दों में, मान्यता प्राप्त मानसिक विकृति का न होना ही मानसिक स्वास्थ्य का अनिवार्य सूचक नहीं है। मानसिक स्वास्थ्य के मूल्यांकन का एक तरीका यह देखना भी है कि व्यक्ति कितने प्रभावी रूप से और सफलतापूर्वक कार्य करता है। समर्थ और सक्षम महसूस करना, तनाव के सामान्य स्तरों से निपटने में सक्षम होना, संतोषजनक संबंध बनाए रखना, स्वतंत्र जीवन व्यतीत करना; और कठिन परिस्थितियों से उबरना और पुनः संभलना, ये सभी मानसिक स्वास्थ्य के लक्षण हैं।

स्वस्थता (फिटनेस) का मतलब शरीर का बेहतर होना है; यह नियमित व्यायाम, समुचित आहार और पोषण तथा शारीरिक स्वास्थ्य लाभ हेतु उचित विश्राम से प्राप्त होता है। स्वस्थता शब्द का उपयोग दो प्रकार से होता है– सामान्य स्वस्थता (स्वास्थ्य और स्वास्थ्य कल्याण) और विशिष्ट स्वस्थता (खेल अथवा व्यवसाय के विशिष्ट पहलुओं को निष्पादित करने की क्षमता पर आधारित कार्योन्मुख परिभाषा)। शारीरिक स्वास्थ्य के रख-रखाव का अर्थ हृदय, रुधिर वाहिकाओं, फेफड़ों और माँसपेशियों की इष्टतम सक्षमता से कार्य करने की क्षमता है। पहले, स्वस्थता से अभिप्राय अकारण थकान के बगैर दैनिक कार्यकलापों को करने की क्षमता होना था। औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप स्वचालन, अधिक खाली समय और जीवनशैली में परिवर्तन के कारण अब यह मानदंड पर्याप्त नहीं है। वर्तमान संदर्भ में, इष्टतम क्षमता अधिक महत्वपूर्ण है।

अब शारीरिक स्वस्थता से अभिप्राय है कार्य और रुचि संबंधी कार्यकलापों को सक्षम और प्रभावी ढंग से करने की शारीरिक क्षमता, स्वस्थ रहना, रोगों के लिए प्रतिरोधकता तथा आकस्मिक परिस्थितियों का सामना करना। स्वस्थता को पाँच श्रेणियों में भी बाँटा जा सकता है– ऐरोबिक व्यायाम द्वारा स्वस्थता, मांसपेशीय मजबूती, मांसपेशीय सहनशीलता, लचीलापन तथा शारीरिक संरचना। स्वस्थ होने से आप मानसिक और भावात्मक चुनौतियों का सामना करने में सक्षम होते हैं। यदि व्यक्ति स्वस्थ है तो वह तन्दुरुस्त और ऊर्जावान महसूस करता है। स्वस्थता से व्यक्ति नियमित शारीरिक माँगों की शरीर में सुरक्षित ऊर्जा से ही पूर्ति करने में सक्षम होता है ताकि वह अचानक आई चुनौती का सामना कर सके जैसे बस पकड़ने के लिए अचानक भागना।

इस प्रकार स्वास्थ्य पूर्ण मानसिक, शारीरिक और सामाजिक स्वास्थ्य कल्याण की स्थिति है जबकि स्वस्थता शारीरिक श्रम के कार्यों को कर सकने की क्षमता है। एक सुपोषित और स्वस्थ व्यक्ति सीखने में अधिक सक्षम होता है और उसमें अधिक ऊर्जा, सहनशक्ति और स्वाभिमान भी होता है। खान-पान के स्वस्थ तरीके और नियमित व्यायाम से स्वस्थ रहने में निश्चित रूप से सहायता मिलेगी। 12-18 वर्ष की किशोरावस्था में जिनका खान-पान सही नहीं होता और जो अल्पपोषित होते हैं उनमें खान-पान संबंधी विकृतियाँ उत्पन्न हो जाती हैं।

3.4 संतुलित आहार की योजना बनाने में आधारभूत खाद्य वर्गों का उपयोग

संतुलित आहार तैयार करने का एक आसान तरीका है, खाद्य पदार्थो को वर्गों में विभाजित करना और फिर यह सुनिश्चित करना कि प्रत्येक वर्ग को भोजन में शामिल किया जाए। प्रत्येक खाद्य वर्ग में समान विशेषताओं वाले विभिन्न खाद्य पदार्थ शामिल होते हैं। यह समान विशेषताएँ खाद्य पदार्थों का स्रोत, इनके द्वारा निष्पादित की जाने वाली शरीर क्रियात्मक क्रियाएँ अथवा इनमें उपस्थित पोषक तत्त्व हो सकते हैं।

खाद्य पदार्थों को उनमें विद्यमान मुख्य पोषक तत्त्वों के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है। यह वर्गीकरण अनेक कारकों के आधार पर एक देश से दूसरे देश में भिन्न होता है। भोजन-योजना को सुलभ करने के लिए भारत में पाँच खाद्य वर्गों का उपयोग किया जाता है। इन खाद्य वर्गो का वर्गीकरण करते समय खाद्य पदार्थों की उपलब्धता, लागत, भोजन पद्धति और कमी से होने वाले प्रचलित रोगों आदि कारकों को ध्यान में रखा जाता है। प्रत्येक वर्ग में सम्मलित सभी खाद्य पदार्थों में पोषक तत्त्वों की मात्रा बराबर नहीं होती। इसलिए प्रत्येक वर्ग के विभिन्न खाद्य पदार्थों को अदल-बदल कर आहार में शामिल किया जाना चाहिए।

विद्यमान पोषक तत्त्वों के आधार पर हुए वर्गीकरण से यह सुनिश्चित होता है कि शरीर को सभी पोषक तत्त्व प्राप्त हो रहे हैं और प्रत्येक वर्ग में खाद्य पदार्थो की विविधता भी है।

भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद् (आई.सी.एम.आर.) द्वारा पाँच मूलभूत खाद्य वर्गों का सुझाव दिया गया है। यह इस प्रकार हैं –

- अनाज, खाद्यान्न और उनके उत्पाद
- दालें और फलियाँ
- दूध और मांस के उत्पाद
- फल और सब्जियाँ
- वसा और शर्करा
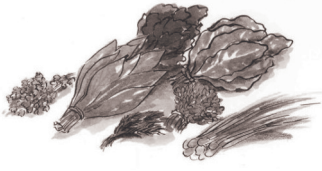
क्रियाकलाप 1

10 ऐसे खाद्य पदार्थो की सूची बनाएँ जो आप आमतौर पर खाते हैं। यह जानने का प्रयत्न करें कि प्रत्येक खाद्य पदार्थ किस खाद्य समूह से संबंधित है। तत्पश्चात् सूचीबद्ध खाद्य पदार्थों में वृहत् पोषक तत्त्वों और सूक्ष्म पोषक तत्त्वों की सूची बनाएँ। उन खाद्य पदार्थों की भी सूची बनाएँ जो सर्वाधिक ऊर्जा के स्रोत हैं।

पाँच खाद्य वर्गों को संक्षिप्त रूप में निम्न सारणी में दिया गया है –

सारणी 1 – पाँच खाद्य वर्ग

खाद्य वर्ग		प्रदत्त मुख्य पोषक तत्त्व
1. **अनाज, खाद्यान्न और उनके उत्पाद** चावल, गेहूँ, रागी, बाजरा, मक्का, ज्वार, जौ तथा उनके उत्पाद जैसे चावल की कनी, गेहूँ का आटा आदि।		ऊर्जा, प्रोटीन, परोक्ष वसा, विटामिन-बी1, विटामिन बी2, फोलिक अम्ल, लौह तत्त्व तथा रेशा
2. **दालें और फलियाँ** काला चना, उड़द, मूँग, मल्का-मसूर (साबुत और दाल) लोबिया, मटर, राजमा, सोयाबीन, फलियाँ आदि।		ऊर्जा, प्रोटीन, परोक्ष वसा, विटामिन-बी1, विटामिन बी2 फोलिक अम्ल, कैल्शियम, लौह तत्त्व तथा रेशा
3. **दूध, मांस और उनके उत्पाद** *दूध* – दही, स्किम्ड मिल्क, पनीर, मक्खन, घी आदि।		प्रोटीन, वसा, विटामिन-बी12, कैल्सियम
मीट– मुर्गा, कलेजी, मछली, अंडा, मांस आदि।		प्रोटीन, वसा, विटामिन-बी2

4. **फल और सब्जियाँ** आम, अमरूद, पका हुआ टमाटर, पपीता, संतरा, मौसमी (स्वीट लाइम), तरबूज़ आदि।		कैरोटीनायड्स, विटामिन-सी, रेशा
सब्जियाँ (हरी पत्तेदार) चौलाई, पालक, सहजन की पत्तियाँ, धनिया पत्ती, सरसों के पत्ते, मेथी के पत्ते, आदि।		परोक्ष वसा, कैरोटीनायड्स, विटामिन-बी2, फोलिक अम्ल, कैल्सियम, लौह तत्त्व तथा रेशा
अन्य सब्जियाँ गाजर, बैंगन, भिंडी, शिमला मिर्च, सेम, प्याज, सहजन, फूलगोभी आदि।		कैरोटीनायड्स, फोलिक एसिड, कैल्सियम तथा रेशा
5. **वसा और शर्करा** *वसा –* मक्खन, घी, हाइड्रोजनीकृत तेल (हाइड्रोजीनिटेड ऑयल्स) खाना बनाने का तेल जैसे मूँगफली, सरसों और नारियल का तेल आदि।		ऊर्जा, वसा तथा अनिवार्य वसा अम्ल
शर्करा– चीनी, गुड़ आदि।		ऊर्जा

स्रोत– गोपालन सी, राम शास्त्री, बी.वी. और बालासुब्रह्मण्यम, एस.सी. (1989), न्यूट्रिटिव वैल्यू ऑफ इंडियन फूड्स, हैदराबाद, नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ़ न्यूट्रीशन, आई.सी.एम.आर.।

याद रखें

एक ग्राम

- कार्बोहाइड्रेट से मिलती है – 4 किलो कैलोरी ऊर्जा
- प्रोटीन से मिलती है – 4 किलो कैलोरी ऊर्जा
- वसा से मिलती है – 9 किलो कैलोरी ऊर्जा

मूलभूत खाद्य वर्गों के उपयोग हेतु दिशा-निर्देश

पाँच खाद्य वर्ग प्रणाली का उपयोग संतुलित आहार की योजना और मूल्यांकन दोनों के लिए किया जाता है। यह दैनिक भोजन संबंधी दिशा-निर्देश है जिसका उपयोग पोषण शिक्षण हेतु भी किया जा सकता है। दिशा-निर्देशों को खाद्य वर्गों के आधार पर अपनाया जा सकता है।

- प्रत्येक आहार में प्रत्येक खाद्य वर्ग से खाद्य पदार्थों को कम-से-कम एक अथवा अधिक बार परोसना (सर्विंग) चाहिए।
- खाद्य पदार्थों का चयन प्रत्येक वर्ग में से करें क्योंकि प्रत्येक वर्ग में खाद्य पदार्थ भले ही समान हैं लेकिन उनमें पोषक तत्त्व एक जैसे नहीं हैं।
- यदि भोजन शाकाहारी है तो आहार में संपूर्ण प्रोटीन गुणवत्ता बढ़ाने के लिए उपयुक्त संयोजनों का उपयोग करें। उदाहरण के लिए अनाज और दालों का संयोजन अथवा भोजन में थोड़ी मात्रा में दूध अथवा दही भी शामिल करना।
- कच्ची सब्जियों और फलों को भोजन में शामिल करना।
- कैल्सियम और अन्य पोषक तत्त्वों की आपूर्ति हेतु कम-से-कम एक बार दूध अवश्य लेना चाहिए क्योंकि दूध में लोहा, विटामिन सी और रेशे के अलावा सभी पोषक तत्त्व शामिल होते हैं।
- अनाज द्वारा कुल कैलोरी के 75 प्रतिशत से अधिक की आपूर्ति नहीं होनी चाहिए।

संतुलित आहार की योजना बनाते समय प्रत्येक खाद्य वर्ग में से खाद्य पदार्थ पर्याप्त मात्रा में चुने जाने चाहिए। अनाज और दालों को पर्याप्त मात्रा में लेना चाहिए। फल और सब्जियाँ भरपूर मात्रा में, मांस आदि आहार सीमित मात्रा में तथा तेल और शर्करा अल्प मात्रा में लेनी चाहिए।

आइए, अब हम आहार मार्गदर्शक पिरामिड के बारे में जानते हैं।

आहार मार्गदर्शक पिरामिड

निम्नलिखित चित्र भारतीयों हेतु आहार मार्गदर्शक पिरामिड को दर्शाता है।
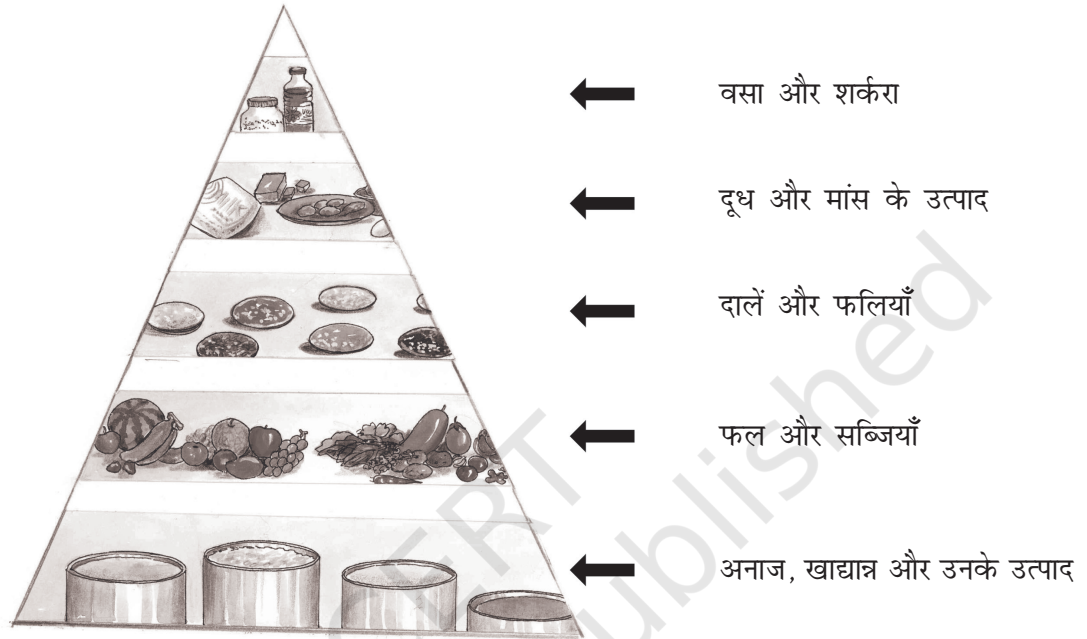
चित्र 2 – आहार मार्गदर्शक पिरामिड

आहार मार्गदर्शक पिरामिड दैनिक खाद्य संबंधी दिशा-निर्देशों का ग्राफिक चित्रण है। यह चित्रण विविधता, संतुलन और अनुपात को दर्शाने हेतु तैयार किया गया है। प्रत्येक खंड का आकार प्रत्येक दिन परोसी जाने वाली निर्धारित मात्रा (सर्विंग्स) को दर्शाता है। नीचे का चौड़ा आधार यह बताता है कि खाद्यान्न प्रचुर मात्रा में लिए जाने चाहिए और ये स्वस्थ आहार की नींव है। अगले स्तर पर फल तथा सब्जियाँ आती हैं, जो यह दर्शाता है कि उनकी आहार में खाद्यान्न से कम प्रधानता है लेकिन फिर भी ये आहार में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। मांस और दूध शिखर के पास एक छोटी पट्टी में हैं। इनमें से प्रत्येक की अल्प आपूर्ति से ही महत्वपूर्ण पोषक तत्त्व जैसे प्रोटीन, विटामिन और खनिज को अत्यधिक वसा और कोलेस्ट्रॉल के बगैर प्राप्त किया जा सकता है। वसा, तेल और मिठाई के लिए शिखर पर थोड़ी-सी जगह है जो दर्शाती है कि इनका बहुत कम उपयोग किया जाना चाहिए।

पिरामिड में एल्कोहलयुक्त पेय पदार्थों को नहीं दर्शाया गया है लेकिन इन्हें भी सीमित मात्रा में लिया जाना चाहिए। मसाले, कॉफी, चाय और डाइट सॉफ्ट ड्रिंक्स शायद ही कोई पोषक तत्त्व प्रदान करते हों लेकिन विवेकपूर्ण ढंग से प्रयोग किए जाने पर ये भोजन का स्वाद और आनंद बढ़ा देते हैं।

दैनिक आहार मार्गदर्शक योजना और खाद्य निर्देश पिरामिड खाद्यान्नों, सब्जियों और फलों पर जोर देते हैं। ये सभी वनस्पतिजन्य खाद्य पदार्थ हैं। एक दिन के संपूर्ण आहार का लगभग 75 प्रतिशत इन तीन वर्गों से होना चाहिए। इस कार्यनीति द्वारा सभी लोगों को जटिल कार्बोज, रेशा, विटामिन और

खनिज तथा बहुत कम मात्रा में वसा प्राप्त होगी। इसके द्वारा शाकाहारी लोगों के लिए आहार-योजना सरलता से तैयार की जा सकती है।

3.5 शाकाहारी आहार

शाकाहारी आहार मुख्यत: वनस्पतिजन्य खाद्य पदार्थों पर निर्भर होता है जैसे– खाद्यान्न, सब्जियाँ, फली, फल, बीज और सूखे मेवे। कुछ शाकाहारी आहारों में अंडा, दूध से बनी वस्तुएँ अथवा दोनों शामिल होते हैं। जो लोग मांस अथवा दूध से बनी वस्तुएँ नहीं खाते वे आहार को पर्याप्त बनाने हेतु दैनिक खाद्य निर्देशिका का उपयोग कर सकते हैं। इनमें खाद्य वर्ग एक समान होते हैं और परोसनों (सर्विंग्स) की संख्या भी बराबर होती है। शाकाहारी लोग मांस के विकल्प के रूप में फली, बीज, सूखे मेवे, टोफू का और जो अंडे खाते हों वे अंडों का चयन कर सकते हैं। फली और कम-से-कम एक कप हरी पत्तेदार सब्जियाँ उतना लौह तत्त्व प्रदान करती हैं जितना सामान्यतया मांस द्वारा प्राप्त होता है। जो शाकाहारी लोग गाय का दूध नहीं पीते वे 'सोया-दूध' ले सकते हैं जो सोयाबीन से बना होता है और यदि इसे अतिरिक्त कैल्शियम, विटामिन डी और विटामिन बी-12 से युक्त करके अधिक पौष्टिक बनाया गया हो (अर्थात् इन पोषक तत्त्वों को इसमें मिलाया गया हो) तो यह उसी के समान पोषक तत्त्व प्रदान करता है।

खाद्य निर्देश पिरामिड में दर्शाए गए पाँच खाद्य वर्गों में से तीन निचले भागों के खाद्य पदार्थों पर अधिक बल दिया गया है। इनमें से प्रत्येक खाद्य वर्ग आपके लिए आवश्यक सभी पोषक तत्त्व प्रदान न कर केवल कुछ पोषक तत्त्व प्रदान करते हैं। एक वर्ग के खाद्य पदार्थ अन्य वर्ग के खाद्य पदार्थों की जगह प्रयुक्त नहीं किए जा सकते। कोई भी एक वर्ग दूसरे से अधिक महत्वपूर्ण नहीं है– अच्छे स्वास्थ्य के लिए आपको इन सभी की आवश्यकता है।

पिरामिड वह रूपरेखा है जो बताती है कि आपको प्रतिदिन क्या खाना है। यह बिलकुल सही नुस्खा नहीं है बल्कि एक सामान्य दिशा-निर्देश है जिससे आपको अपने लिए सही और स्वास्थ्यवर्धक आहार का चयन करने में सहायता मिलती है। पिरामिड में विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थ खाने की सलाह दी गई है ताकि आपको आवश्यक पोषक तत्त्व मिलें और साथ ही उपयुक्त वज़न बनाए रखने के लिए सही मात्रा में कैलोरी भी मिले।

3.6 किशोरावस्था में आहार संबंधी पैटर्न

किशोर के स्वास्थ्य और गुणवत्ता के लिए स्वास्थ्यवर्धक भोजन खाना महत्वपूर्ण है। किशोरों की पोषण संबंधी आवश्यकताएँ अत्यधिक भिन्न होती हैं लेकिन सामान्यतया वय: संधि (यौवनारंभ) के दौरान तीव्र वृद्धि तथा शारीरिक संरचना में परिवर्तन के कारण ये बढ़ जाती हैं। समग्र भावनात्मक और शारीरिक स्वास्थ्य सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त पोषण महत्वपूर्ण है। खान-पान संबंधी अच्छी आदतों से भविष्य में मोटापा, हृदय संबंधी रोग, कैंसर और मधुमेह जैसे चिरकालिक रोगों से बचा जा सकता है।

पोषक तत्त्व अंतर्ग्रहण संबंधी अध्ययनों से पता चलता है कि किशोरों में निर्धारित मात्रा से कम मात्रा में विटामिन-ए, थायमिन, लौह तत्त्व और कैल्शियम लेने की संभावना रहती है। वर्तमान में जितना इष्टतम माना जाता है वे उससे अधिक मात्रा में वसा, शर्करा, प्रोटीन और सोडियम लेते हैं।

दो भोजनों के बीच में खाने की आदत पर तो अक्सर चिंता व्यक्त की जाती है परंतु यह देखा जाता है कि किशोर पारंपरिक भोजन से हटकर खाए गए भोजन से काफी पोषण प्राप्त करते हैं। उनके द्वारा खाए जाने वाले भोजन का चयन खाने के समय अथवा स्थान से अधिक महत्वपूर्ण है। वे अधिक ऊर्जा और प्रोटीन वाले खाद्य पदार्थ आमतौर पर चुनते हैं। इनके पूरक के रूप में ताजा सब्जियों और फलों तथा संपूर्ण खाद्यान्न उत्पादों पर बल दिया जाना अति आवश्यक है।

किशोरों की खान-पान संबंधी सामान्य आदतें क्या हैं और उन्हें पहचानना क्यों आवश्यक है? उनके आहार पैटर्न को समझने से हमें आहार की पोषण संबंधी पर्याप्तता का बेहतर मूल्यांकन करने में और यह सुनिश्चित करने में कि वे स्वास्थ्य और कुशलता हेतु न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति कर रहे हैं, सहायता मिलेगी। सामान्य खान-पान संबंधी सनक में भोजन न खाना, नियमित रूप से फ़ास्ट फ़ूड खाना, फल और सब्जियाँ न खाना, बार-बार नाश्ता (स्नैक) लेना और डाइटिंग करना शामिल हैं। इन सभी मुद्दों को अलग-अलग संबोधित करके आप यह सुनिश्चित कर सकते हैं कि आप पोषण संबंधी न्यूनतम आवश्यकताओं को पूरा कर रहे हैं।

भोजन में अनियमितता और एक बार भोजन न करना – किशोरावस्था आरंभ होने से इसके अंतिम वर्षों तक किशोरों में खाना न खाने और घर से बाहर खाने की संख्या बढ़ती जाती है जो स्वतंत्रता और घर से बाहर समय बिताने की बढ़ती आवश्यकता को दर्शाती है। रात्रि का भोजन दिन का सर्वाधिक नियमित रूप से खाया जाने वाला भोजन है। लड़कों की तुलना में लड़कियाँ अधिकतर शाम का खाना, सुबह का नाश्ता और दोपहर का भोजन खाना छोड़ देती हैं। सीमित संसाधनों वाले कई घरों में किशोरों को पर्याप्त संख्या अथवा मात्रा में भोजन भी नहीं मिलता जिससे उनके भीतर पोषक तत्त्वों की कमी हो जाती है।

जनसमुदाय के अन्य किसी आयु-वर्ग की तुलना में किशोरों और 25 वर्ष की आयु से कम के युवाओं द्वारा अकसर नाश्ते की उपेक्षा की जाती है और नाश्ता नहीं खाया जाता। लड़कियाँ, लड़कों की अपेक्षा ज़्यादातर नाश्ता नहीं लेती हैं, इसका एक संभावित कारण पतला होने की कोशिश करना और बार-बार डाइटिंग करने के प्रयास हो सकते हैं। बहुत-सी किशोर लड़कियाँ यह मानती हैं कि वे नाश्ता अथवा दोपहर का भोजन नहीं खाएँगी तो अपना वजन नियंत्रित कर सकती हैं। वास्तव में, इस प्रयास से बिल्कुल विपरीत प्रभाव होता है। मध्याह्न या दोपहर के भोजन के समय तक उन्हें इतनी अधिक भूख लग आती है कि वे ''बचाई हुई किलोकैलोरी'' की क्षतिपूर्ति के लिए और अधिक कैलोरी ग्रहण कर लेती हैं। वस्तुतः नाश्ता न खाने से चयापचय धीमा हो जाता है और इसके परिणामस्वरूप वजन बढ़ता है और कार्य क्षमता में कमी आती है।

स्वल्पाहार (स्नैकिंग) – स्वल्पाहार (स्नैकिंग) किशोरों के लिए शायद जीने का तरीका है। ज़रूरी नहीं कि यह खराब आदत हो। विशेष तौर पर सक्रिय और बढ़ते हुए किशोरों में यह ऊर्जा स्तर बनाए रखने में सहायता करता है। कई किशोर प्रतिदिन तीन बार नियमित भोजन नहीं कर पाते क्योंकि उनमें कोई-न-कोई भोजन छोड़ देने की प्रवृत्ति होती है। इसलिए वास्तव में स्नैकिंग अनिवार्य पोषक तत्त्वों के पर्याप्त अंतर्ग्रहण को सुनिश्चित रखने के लिए लाभकारी है। फिर भी केवल स्वल्पाहारों पर जीवित रहना स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है।

फ़ास्ट फ़ूड – किशोरों में, विशेषकर शहरी क्षेत्रों में, फ़ास्ट फ़ूड खाने की अधिक प्रवृत्ति होती है क्योंकि यह सुविधाजनक होता है और यह प्रारूपिक रूप से एक सामाजिक मसला है और उनका यह मानना है कि यह आजकल का फ़ैशन है। अक्सर फ़ास्ट फ़ूड में "वसा" और "कैलोरी" भरपूर मात्रा में होती है। फ़ास्ट फ़ूड रेस्टोरेंट में भी खाना खाने के संबंध में हमें बेहतर विकल्प चुनने चाहिए। सारणी 2 में फ़ास्ट फ़ूड के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी दी गई है।

डाइटिंग– किशोरों में मोटापा एक गंभीर समस्या बनता जा रहा है। संपूर्ण जनसमुदाय में शरीर का आदर्श वजन बनाए रखने के लिए हस्तक्षेप किए जाने की आवश्यकता है। यदि ऐसा नहीं किया जाता है तो उनमें से 80 प्रतिशत लोग वयस्क होने पर सामान्य से अधिक मोटे होंगे। इससे उन्हें डायबिटीज़, उच्च रक्तचाप, उच्च कोलेस्ट्रॉल और स्लीप एपनिया (सोते समय श्वास-रोध) सहित कई चिकित्सा संबंधी समस्याएँ हो सकती हैं।

सारणी 2 – फास्ट फूड्स की पोषण संबंधी परिसीमाएँ

निम्नलिखित कारक फ़ास्ट फूड भोजनों की पोषण संबंधी प्रमुख सीमाएँ दर्शाते हैं–

कैल्शियम, राइबोलोविन, विटामिन ए – दूध अथवा मिल्कशेक को छोड़कर बाकी फास्टफूड में ये तीनों अनिवार्य पोषक तत्त्व कम होते हैं।

फ़ोलिक अम्ल, फ़ाइबर – बहुत कम फ़ास्ट फ़ूड्स इन प्रमुख कारकों के स्रोत होते हैं।

वसा – कई भोजन संयोजनों में वसा से प्राप्त ऊर्जा की उच्च मात्रा होती है।

सोडियम – फ़ास्ट फ़ूड भोजन में सोडियम की मात्रा अधिक होती है जो कि वांछनीय नहीं है।

ऊर्जा – सामान्य भोजन संयोजनों में अन्य पोषक तत्त्वों की मात्रा की तुलना में ऊर्जा की मात्रा बहुत अधिक होती है।

यद्यपि फ़ास्ट फ़ूड आहार पोषक तत्त्व प्रदान करते हैं लेकिन वे किशोरों की पोषण संबंधी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं करते। किशोरों और स्वास्थ्य कर्मियों दोनों को यह समझना चाहिए कि फ़ास्ट फूड पोषणीय दृष्टि से तभी स्वीकार्य होते हैं यदि इनका उपभोग उपयुक्त तरीके से और संतुलित आहार के एक भाग के रूप में किया जाए। लेकिन जब वे आहार का मुख्य भाग बन जाते हैं तो यह चिंता का कारण है। पोषक तत्त्व संबंधी असंतुलन कुछ वर्षों तक समस्या नहीं लगता जब तक कि कोई विशिष्ट समस्या जैसे कोई पुराना रोग उत्पन्न नहीं होता। तथापि यह दर्शाने के लिए काफी प्रमाण हैं कि किशोरों का भोजन अंतर्ग्रहण पैटर्न जीवन में आगे चलकर उनके स्वास्थ्य को प्रभावित कर सकता है।

फिर भी सामान्य वजन वाले किशोर अक्सर इसलिए डाइटिंग करते हैं क्योंकि उनकी धारणा है कि 'पतला होना' फैशन में है। मीडिया से लड़कियों को 'पतला होने', सुंदर शरीर की धारणाओं और शरीर का वजन कम करने के संबंध में बहुत जानकारियाँ मिलती रहती हैं। ऐसे समाज के संदर्भ में जो शारीरिक सुंदरता को अधिक महत्त्व देता है, ये छवि किशोरों को मिश्रित संदेश देती है जिसके परिणामस्वरूप वजन कम करने के हानिकारक और अनावश्यक प्रयास किए जाते हैं।

विशेषज्ञों की निगरानी में न की गई डाइटिंग के परिणाम हानिकारक हो सकते हैं जिसमें किशोरों में खान-पान संबंधी विसंगतियाँ भी शामिल हैं। डाइटिंग के कुछ लक्षण हैं – भोजन छोड़ देना, थोड़ा थोड़ा करके खाना, उपवास करना अथवा विरेचक दवाओं अथवा डाइट पिल्स का उपयोग करना। इस प्रकार की डाइटिंग के परिणामों में वजन कम करने और पुनः वही वजन प्राप्त करने के चक्र के साथ, खान-पान संबंधी विकृतियाँ और मोटापा, आत्मविश्वास में कमी होना और अन्य मनोवैज्ञानिक समस्याएँ होने की संभावना होती है। इसके परिणामस्वरूप कार्डियोवेस्कुलर (हृदय संबंधी समस्याएँ) जोखिम और बढ़ सकता है और मृत्यु भी हो सकती है।

डाइटिंग से संबंधित समस्याओं को दूर करने के लिए एक उपाय यह है कि 'डाइट' शब्द को हटाकर इसके स्थान पर स्वस्थ खान-पान को प्रतिस्थापित किया जाए। यदि आप जीवन में नियमित रूप से स्वस्थ जीवनशैली और स्वस्थ आहार पद्धति अपनाते हैं तो आपको निरंतर डाइटिंग करने की आवश्यकता नहीं होगी। स्वस्थ आहार को बढ़ावा देने के लिए खान-पान संबंधी अच्छी आदतों की पहचान करना पहला कदम है। स्वस्थ जीवन शैली अपनाना सर्वोत्तम है जिसमें स्वस्थ खान-पान संबंधी आदतें और नियमित व्यायाम शामिल है।

3.7 आहार संबंधी व्यवहार में परिवर्तन करना

आपने 'स्वयं' पर आधारित अध्याय में पढ़ा है कि किशोरावस्था वह समय है जब व्यक्ति प्राधिकार के संबंध में प्रश्न करना आरंभ कर देता है और अपनी हैसियत को स्थापित करने का प्रयास करता है। खान-पान संबंधी आचरण उन माध्यमों में से एक है जिनके द्वारा किशोर वैयक्तिकता को अभिव्यक्त करते हैं। अत: कई बार साथियों के कहे अनुसार घर का नियमित खाना (जो स्वास्थ्यकारी है) न खाना और बाहर खाना (जो स्वास्थ्यकारी नहीं है) किशोरावस्था में एक सामान्य-सी बात है।

हमारे लिए जीवनशैली और आहार पद्धति को बदलना तभी सरल है, यदि हमें यह विश्वास हो कि हम ऐसा करना चाहते हैं। ऐसे कौन से तरीके हैं जिनसे किशोर अपने खुद के व्यवहार को बदल सकते हैं? अगले भाग में स्वस्थ आहार पद्धतियों को कैसे अपनाया जाए, इस बारे में हम और अधिक विस्तार से पढ़ेंगे।

टीवी देखने के समय को सीमित करना – टीवी देखने का समय प्रतिदिन लगभग एक या दो घंटे तक सीमित होना चाहिए (इसमें वीडियो गेम खेलना अथवा कंप्यूटर का उपयोग करना भी शामिल है)। टीवी देखने में अधिक कैलोरी का उपयोग नहीं होता है और यह गलत ढंग से खाने को बढ़ावा देता है क्योंकि टीवी देखते हुए कुछ न कुछ खाते रहना सामान्य-सी बात है। जो ऐसा करते हैं उनमें सामान्यत: अत्यधिक भोजन खाने या अत्यधिक कम भोजन खाने की आदत पाई जाती है।

खान-पान संबंधी स्वस्थ आदतें – प्रतिदिन तीन बार औसत मात्रा में पूर्ण संतुलित आहार तथा दो बार पोषक तत्त्वों से भरपूर नाश्ता लें। कोशिश करें कि आप कोई भी भोजन न छोड़ें।

स्वल्पाहार (स्नैक्स) – दिन में केवल दो बार स्नैक्स लिए जाने चाहिए और इसमें कम कैलोरी वाले खाद्य पदार्थ जैसे कच्चे फल अथवा सब्जियाँ शामिल की जा सकती हैं। स्नैक्स के लिए उच्च कैलोरी अथवा उच्च वसा युक्त भोजन विशेषकर आलू के चिप्स, बिस्कुट और तले हुए खाद्य पदार्थों का उपयोग न करें। निस्संदेह आप एकाध बार अपना मनपसंद स्नैक खा सकते हैं लेकिन इसे आदत नहीं बनाया जाना चाहिए।

पानी पीना – रोज चार से छह गिलास पानी पीना विशेषकर भोजन से पहले पानी पीना अच्छी आदत है। पानी में कोई कैलोरी नहीं होती और इससे पेट भरा होने का एहसास होगा। सॉफ्ट ड्रिंक्स और फलों के जूस बार-बार न पीएँ क्योंकि इनमें अत्यधिक ऊर्जा होती है (150-170 कैलोरी प्रति आपूर्ति)।

डाइट जर्नल – इससे भोज्य पदार्थ और पेय पदार्थ के अंतर्ग्रहण, टीवी देखने, वीडियो गेम खेलने और व्यायाम के समय का साप्ताहिक ब्यौरा रखने में सहायता मिलेगी। प्रत्येक सप्ताह शरीर का वजन मापना अच्छी आदत है।

व्यायाम – यह स्वस्थ जीवन के लिए अनिवार्य है। पाठ्येतर कार्यकलापों जैसे खेल इत्यादि में भाग लेने से सक्रियता स्तर को उच्च बनाए रखने में सहायता मिलती है। शारीरिक कार्यकलापों को बढ़ाने संबंधी कुछ संकेत निम्नलिखित हैं–

- थोड़ी दूरी तक जाना हो तो पैदल चलें अथवा साइकिल चलाएँ।
- बिल्डिंग में लिफ्ट के बजाय सीढ़ियों का उपयोग करें।
- प्रत्येक सप्ताह में 3-4 बार, 20-30 मिनट के लिए नियमित व्यायाम करें। इसमें टहलने, जॉगिंग करने, तैरने अथवा बाइक चलाने को शामिल किया जा सकता है। खेल क्रीड़ाएँ जैसे रस्सी कूदना, हॉकी, बास्केट बॉल, वॉलीबॉल अथवा फुटबॉल खेलना और योग करना सभी आयु वर्गों के लिए उचित है।

नशीले पदार्थों का उपयोग एवं दुरुपयोग – किशोरावस्था में मादक पदार्थों का सेवन और दुरुपयोग बहुत महत्वपूर्ण और चिंताजनक सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्या है। किशोरों द्वारा तंबाकू, शराब (ऐल्कोहल), मेरीजुआना और अन्य नशीली दवाओं का व्यापक रूप से प्रयोग किया जाता है। नशीली दवा और शराब के सेवन से किशोरों के पोषण और स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है। ऐसे किशोरों की शारीरिक और मनो-सामाजिक पुनर्वास प्रक्रिया में पोषण संबंधी हस्तक्षेप, समर्थन और परामर्श महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

अभी तक जो चर्चा हमने की है वह शहरी और अर्ध-शहरी क्षेत्रों में रहने वाले किशोरों के संदर्भ में अधिक संगत है। ग्रामीण परिवेश इससे भिन्न होगा। ग्रामीण क्षेत्रों में लड़के और लड़कियाँ अकसर कृषि संबंधी कार्यों में संलग्न रहते हैं। वे अपने माता-पिता को मुर्गी पालन, पशु पालन, मधुमक्खी पालन जैसे उद्यमों में भी सहायता कर रहे हो सकते हैं। लड़के खेती में सहायता करते हैं। जब माता-पिता आजीविका के लिए कार्य करते हैं तो लड़कियाँ छोटे भाई-बहनों की देखभाल करने, खाना बनाने और साफ-सफाई करने में भी सहायता करती हैं। इसके अलावा पशुओं के लिए चारा इकट्ठा करने, लकड़ी इकट्ठा करने और पानी लाने का कार्य भी होता है। जनजातीय क्षेत्रों में अधिकांश लोग वन उत्पादों जैसे – सरस फलों (बौरो), फूल, पत्तियों, कंद-मूलों पर निर्भर होते हैं। वे इन उत्पादों को एकत्र करने और इनको संसाधन करने में समय व्यतीत करते हैं।

इन कार्यों में संलग्न लड़कियों और लड़कों का सक्रियता स्तर उच्च होगा और इसलिए उनकी ऊर्जा संबंधी आवश्यकताएँ अधिक होंगी। किशोरावस्था में वृद्धि के उच्च दर के कारण प्रोटीन संबंधी आवश्यकताएँ भी अधिक होती हैं। इसलिए ग्रामीण क्षेत्रों के अत्यधिक गरीब समुदायों में किशोरों के कुपोषित होने की संभावनाएँ अधिक होती हैं। लड़कियाँ विशेष रूप से रक्ताल्पता (खून में लौह तत्त्व की कमी) से पीड़ित होती हैं और उन्हें स्वस्थ रहने के लिए ऐसे खाद्य पदार्थों की आवश्यकता होती है जिनमें लौह तत्त्व प्रचुर मात्रा में मौजूद हों। ग्रामीण क्षेत्रों में धनी परिवारों के किशोरों को शहरी परिवारों में उच्च आय वर्गों के किशोरों के समान ही कई समस्याएँ होंगी। वे अधिकतर निष्क्रिय रहने वाले और वसा एवं कार्बोहाइड्रेट की प्रचुर मात्रा वाले खाद्य पदार्थों का सेवन करने वाले होंगे।

किशोरावस्था और एनीमिया (रक्ताल्पता)

विश्वभर में लगभग दो बिलियन लोग एनीमिया से ग्रस्त हैं जो कि मुख्यत: लौह तत्त्व की कमी से होता है। यह मुख्यत: महिलाओं और लड़कियों को प्रभावित करता है। 2005-2006 में हुए नवीनतम राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण-3 (एन.एफ.एच.एस.-3) से पता चलता है कि तीस प्रतिशत किशोर लड़कों की तुलना में 56 प्रतिशत किशोर लड़कियाँ एनीमिया से ग्रस्त हैं। इसकी तुलना में 6 से 59 माह की आयु-वर्ग के छोटे बच्चों में यह आँकड़ा 70 प्रतिशत है। यह भी देखा गया है कि 1991-92 में हुए पिछले सर्वेक्षण की तुलना में एनीमिया के मामले इस समय वास्तव में बढ़ रहे है।

भारत जैसे विकासशील देशों में गरीबी, अपर्याप्त आहार, खास बीमारियों, बार-बार गर्भधारण करने और स्तनपान कराने तथा स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँच की कमी के कारण एनीमिया असंगत रूप से अधिक है।

एनीमिया दूर करने के प्रयास करने हेतु किशोरावस्था सबसे बेहतर समय है। वृद्धि संबंधी आवश्यकताओं के अतिरिक्त गर्भावस्था से पूर्व लड़कियों को लौह तत्त्व के स्तर को सुधारना आवश्यक है। लड़कों और लड़कियों को स्कूलों द्वारा मनोरंजन संबंधी कार्यकलापों और जनसंचार माध्यमों के द्वारा एनीमिया के बारे में जानकारी दी जा सकती है। लौह तत्त्व युक्त खाद्य पदार्थों और जहाँ आवश्यक हो लौह तत्त्व संपूरकों के बारे में जानकारी देने के लिए भी इनका प्रभावी ढंग से उपयोग किया जा सकता है।

- सामाजिक-आर्थिक-राजनीतिक प्रणाली
- खाद्य पदार्थों की उपलब्धता, उत्पादन और वितरण प्रणाली

बाह्य कारक

- परिवार इकाई और परिवार की विशेषताएँ
- पालन-पोषण के तरीके
- मित्रमंडली
- सामाजिक और सांस्कृतिक
- मानक और मूल्य
- जन संचार
- फ़ास्ट फूड्स
- खाने से संबंधित सनक
- पोषण संबंधी ज्ञान
- व्यक्तिगत अनुभव

आंतरिक कारक

- शारीरिक आवश्यकताएँ तथा विशेषताएँ
- शारीरिक छवि और स्व-संकल्पना
- व्यक्तिगत मूल्य और विश्वास
- खाने संबंधी प्राथमिकताएँ और अर्थ
- मनो-सामाजिक विकास
- स्वास्थ्य

जीवनशैली

खान-पान संबंधी व्यक्तिगत आचरण
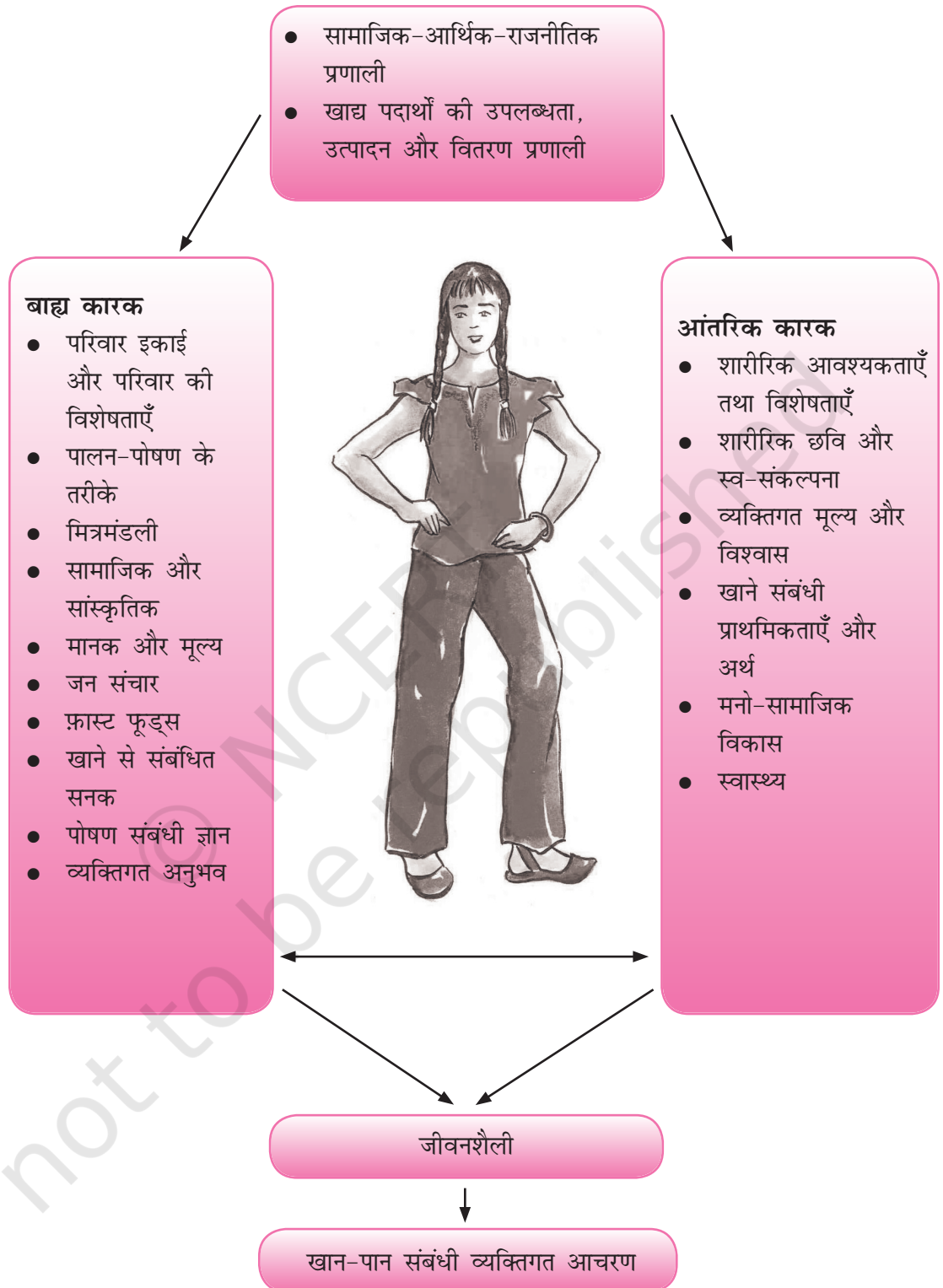
चित्र 3 – किशोरों के खान-पान संबंधी आचरण को प्रभावित करने वाले कारक

3.8 खान-पान संबंधी आचरण को प्रभावित करने वाले कारक

किशोरावस्था में पहुँचने पर व्यक्ति की खान-पान संबंधी आदतों को कई चीज़ें प्रभावित करती हैं और इन आदतों का निर्माण अत्यंत जटिल होता है, जैसा कि चित्र 3 में दर्शाया गया है। किशोरों की बढ़ती हुई स्वतंत्रता, सामाजिक जीवन में बढ़ती भागीदारी और सामान्य तौर पर व्यस्त कार्यक्रम का उनके खान-पान पर निश्चित प्रभाव पड़ता है। अब वे अपने लिए खाना खरीदने और स्वयं बनाने के लिए सक्षम होने लगते हैं और अक्सर जल्दी-जल्दी खाते हैं और घर से बाहर खाते हैं।

किशोरों को समुचित रूप से स्वस्थ खान-पान संबंधी आदतें बनाने हेतु प्रोत्साहित करने के लिए अभिभावकों (माता-पिता) को बच्चों को उनके विकासकाल के दौरान विभिन्न प्रकार के पोषणीय खाद्य पदार्थों में से चुनने का अवसर देना चाहिए। जब तक वे किशोरावस्था में पहुँचेंगे उन्हें रसोई घर का उपयोग करने के लिए कुछ स्वतंत्रता चाहिए होगी। यह लड़कों और लड़कियों दोनों पर सटीक बैठता है।

वैसे तो खान-पान संबंधी आदतों का मूल आधार परिवार है, लेकिन इन पर बाहर का भी कुछ प्रभाव पड़ता है। किशोरावस्था में **हमजोलियों** की संगति का प्रभाव समर्थन और तनाव दोनों के लिए कारगर हो सकता है। हमजोलियों की सहायता सामान्य से अधिक वजन वाले किशोरों के लिए सहायक हो सकती है, लेकिन वही दोस्त कभी उसे चिढ़ाने का कारण भी बन सकते हैं।

विज्ञापनों में दिए गए संदेशों के प्रति किशोर अत्यधिक संवेदनशील होता है। **टीवी** में खाद्य पदार्थों के विज्ञापनों और कार्यक्रम में दर्शाई गई खान-पान की आदतों ने दशक से अधिक समय से लोगों को प्रभावित किया है। अधिकांश विज्ञापन अत्यधिक शर्करा और वसा वाले उत्पादों के लिए होते हैं। अतः किशोरों को इन खाद्य उत्पादों का उपयोग विवेक से करना चाहिए।

तैयार भोजन (रेडी टू ईट) की सरल उपलब्धता भी किशोरों की खान-पान संबंधी आदतों को प्रभावित करती है। होम डिलीवरी द्वारा/वेंडिंग मशीनों से, सिनेमा हॉल में, मेलों में, खेल कार्यक्रमों में, फास्ट फूड बिक्री केंद्रों पर और सुविधाजनक किराने की दुकानों पर दिनभर खाना उपलब्ध रहता है। इसलिए किशोर कई बार खाते हैं, और ऐसे पदार्थ खाते हैं जो स्वास्थ्यकर नहीं होते। इन प्रवृत्तियों पर नज़र रखनी चाहिए।

3.9 किशोरावस्था में होने वाली खान-पान संबंधी विकृतियाँ

किशोरावस्था में शारीरिक विकास तीव्रता से होता है और शरीर की छवि के निर्माण का भी विकास होता है। इस समय खान-पान संबंधी विकृतियों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। ये परिवर्तन आत्मविश्वास संबंधी समस्याएँ बढ़ा देते हैं। उदाहरण के लिए **ऐनोरेक्ज़िया नर्वोसा** वह विकृति है, जो शारीरिक छवि को बिगाड़ने से जुड़ी है, और सामान्यतया किशोरावस्था में ही दिखाई देती है। इस उम्र में व्यक्ति अपने पहचान के संकट से जूझ रहा होता है और शारीरिक छवि संबंधी समस्याओं के प्रति सर्वाधिक संवेदनशील होता है। खान-पान संबंधी अनियंत्रित आदतें किशोरों को सामान्य वयस्क के शरीर की छवि ग्रहण करने में बाधा उत्पन्न कर सकती हैं।

ऐनोरेक्ज़िया नर्वोसा को हम, सोनम के उदाहरण से समझते हैं। वह एक आदर्श (परफेक्ट) शरीर चाहती है। उसने अपने माता-पिता और अध्यापकों की सलाह को ध्यान नहीं दिया और खाना लगभग बंद कर दिया। उस पर दुबले शरीर की सनक सवार हो गईं यद्यपि उसका वजन सामान्य है, तथापि वह हर समय इस दबाव में है कि उसे फिल्मों में दिखाई पड़ने वाली कुछ हीरोइनों अथवा पत्रिकाओं में दिखाई देने वाली मॉडलों जितना पतला होना है। उसमें आत्मविश्वास की कमी है, और वह उदास रहती है। इससे वह अपने परिवार और मित्रों से दूर होती जा रही है। वह यह नहीं समझती कि वह कुपोषण का शिकार हो रही है, और इस बात पर ज़ोर देती है कि वह मोटी है। वह स्पष्टत: ऐनोरेक्ज़िया नर्वोसा नामक खान-पान संबंधी विकार से ग्रस्त है। वह इस बात से अनभिज्ञ है कि अत्यधिक वजन कम होने से मृत्यु भी हो सकती है।

बुलीमिया एक अन्य प्रकार की खान-पान संबंधी विकृति है। बुलीमिया अकसर किशोरावस्था के अंतिम भाग में अथवा वयस्कावस्था के आरंभ में वज़न कम करने के असफल प्रयासों हेतु लिए गए विभिन्न प्रकार के आहारों से शुरू होता है। इससे ग्रस्त रोगी बार-बार खाने लगता है। अत्यधिक खाता है। उल्टी अथवा विरेचकों के उपयोग द्वारा पेट साफ करता है। यद्यपि यह महिलाओं में अधिक होता है, लेकिन पाँच से दस प्रतिशत खान-पान संबंधी विकृतियाँ पुरुषों में भी होती हैं।

ऐनोरेक्ज़िया और बुलीमिया के गंभीर परिणाम हो सकते हैं जैसे—ऐंठन होना, गुरदा खराब होना, हृदय गति असामान्य होना और दाँतों का क्षरण होना। किशोरवय की लड़कियों में ऐनोरेक्ज़िया से मासिक धर्म देर से आरंभ हो सकता है, कद स्थायी रूप से कम हो सकता है और इससे ओस्टियोपोरोसिस (हड्डियाँ कमज़ोर होना) भी हो सकता है।

शायद इन विकृतियों से बचने के लिए व्यक्ति के पास सबसे अच्छा उपाय है अपनी विशिष्टता को सराहने की कला सीखना। स्वयं का आदर करना और स्वयं को महत्त्व देना निश्चित तौर पर जीवनरक्षक सिद्ध होगा। आहार संबंधी महत्वपूर्ण हस्तक्षेप में संतुलित आहार सुनिश्चित करना, आहार में रेशे अधिक मात्रा में लेना और क्षतिपूर्ति हेतु पोषक तत्त्वों/खाद्य संपूरकों का उपयोग करना शामिल है।

इस प्रकार किशोरावस्था में होने वाले शारीरिक, सामाजिक और भावनात्मक परिवर्तन किशोर की पोषणीय स्थिति और खान-पान संबंधी आदतों को अत्यधिक प्रभावित करते हैं। यद्यपि युवा दीर्घायु होने के लिए, पोषण के बारे में जानने के लिए कभी-कभार ही प्रेरित होते हैं तथापि स्वास्थ्य के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए स्वस्थ आहार सिद्धांतों को कैसे अपनाया जाए, यह सीखने से स्वस्थ वर्तमान और भावी जीवन की नींव रखने में सहायता मिल सकती है।

स्वास्थ्य, युवाओं की मुख्य संपत्ति है; यह दैनिक जीवन के अन्य संसाधनों की उपलब्धता और उनके उपयोग को प्रभावित करता है। व्यक्ति के पास अन्य संसाधन कौन-से हैं? आगामी अध्याय – ''संसाधनों का प्रबंधन'' में इस प्रश्न का समाधान किया गया है और यह भी चर्चा की गई है कि व्यक्ति समय, ऊर्जा और धन जैसे प्रमुख संसाधनों का बेहतर ढंग से उपयोग और प्रबंधन कैसे कर सकता है?

महत्वपूर्ण शब्द और उनके अर्थ

सक्रियता का स्तर

व्यक्ति की सक्रियता का स्तर, अर्थात् वह कम चलने वाला या हल्का, संतुलित या अधिक भारी है, यह व्यक्ति के व्यवसाय से गहरे स्तर तक जुड़ा हुआ है।

unit1_30june_asCorrected.indd 44 11-09-2017 12:06:40 PM

संतुलित आहार

वह आहार जिसमें विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थ पर्याप्त मात्रा और सही अनुपात में शामिल हों जो कि अच्छे स्वास्थ्य के विकास और उसे बनाए रखने के लिए सभी अनिवार्य पोषक तत्व प्रदान करते हों।

खाद्य वर्ग

अनेक समान गुणों वाले खाद्य पदार्थ जिन्हें एक साथ समूहित किया गया हो। समूहित करने की विशेषताएँ कार्य, पोषक तत्व अथवा स्रोत हो सकती हैं।

स्तनपान

वह अवधि जब माँ अपने शिशु को अपना दूध पिलाती है।

शरीर-क्रियात्मक स्थिति

वह स्थिति जब विशेष शारीरिक अवस्थाओं के कारण पोषक तत्वों की आवश्यकता बढ़ जाती है, जैसे– गर्भावस्था और स्तनपान।

संस्तुत आहारीय मात्रा

पोषक तत्वों की वे मात्राएँ जो व्यावहारिक रूप से सभी स्वस्थ व्यक्तियों की आवश्यकता को पूरा करते हैं। ये किसी एक व्यक्ति की आवश्यकता नहीं बल्कि ऐसे दिशा-निर्देश हैं जो हमें दैनिक रूप से खाए जाने वाले पोषकों की मात्रा के बारे में बताते हैं।

समीक्षात्मक प्रश्न

1. आर.डी.ए. और आवश्यकता के बीच अंतर बताएँ।
2. खाद्य वर्गों के प्रयोग से संतुलित भोजन की योजना बनाना किस प्रकार सरल हो जाता है, स्पष्ट रूप से समझाइए।
3. ऐसे 10 खाद्य पदार्थ बताएँ जो संरक्षी खाद्य वर्ग से संबंधित हैं। अपने चयन के लिए कारण भी बताएँ।
4. उन कारकों की चर्चा करें जो किशोरावस्था में खान-पान संबंधी आचरण को प्रभावित करते हैं।
5. खान-पान संबंधी ऐसी दो विकृतियों का विस्तार से वर्णन करें जो किशोरावस्था में हो सकती हैं। इनकी रोकथाम के सर्वोत्तम उपाय क्या हैं?

प्रायोगिक कार्य 3

खाद्य, पोषण, स्वास्थ्य और स्वास्थ्य का रख-रखाव

1. अच्छे स्वास्थ्य के 10 लक्षण बताइए। निम्नलिखित फॉर्मेट का प्रयोग करते हुए अपना मूल्यांकन कीजिए।

अच्छे स्वास्थ्य के लक्षण	आपकी श्रेणी (रेटिंग)		
	संतोषजनक	सामान्य	सामान्य से कम
1.			
2.			
3.			

4.			
5.			
6.			
7.			
8.			
9.			
10.			

2. अपने एक दिन के आहार को रिकॉर्ड करें। पाँच खाद्य वर्गों के समावेशन के संदर्भ में प्रत्येक भोजन का मूल्यांकन करें। क्या आपको लगता है कि आपका आहार संतुलित है? अपना उत्तर लिखने के लिए निम्नलिखित फॉर्मेट का प्रयोग करें–

भोजन/मेन्यू (आहार–सूची)	पाँच खाद्य वर्गों का समावेशन	भोजन संतुलित है/भोजन संतुलित नहीं है, इस पर टिप्पणी।

3. निम्नलिखित जानकारी प्राप्त करने के लिए अपने परिवार के सदस्यों, जैसे– दादी, माँ अथवा चाची/ताई/बुआ/मौसी का साक्षात्कार करें–
   क. खान–पान संबंधी वर्जनाएँ और इनको अपनाए जाने के कारण
   ख. भारत के जिस क्षेत्र से आप संबंध रखते हैं, वहाँ उपवास और त्यौहारों के दौरान अपनाई जाने वाली खान–पान संबंधी प्रथाएँ
   ग. उपवास के दौरान बनाए जाने वाले व्यंजन

प्राप्त जानकारी को निम्नलिखित रूप से सारणीबद्ध करें–

क्षेत्र	अवसर (उपवास का स्वरूप)	व्यंजन	विद्यमान पोषक तत्व

सारणीबद्ध जानकारी के आधार पर दो निष्कर्ष बताएँ।

unit1_30june_asCorrected.indd 46 11-09-2017 12:06:40 PM

अध्याय

4

संसाधन प्रबंधन

उद्देश्य

इस अध्याय को पूरा करने के बाद शिक्षार्थी सक्षम होंगे –

- संसाधन की संकल्पना पर चर्चा करने,
- विभिन्न संसाधनों को पहचानने,
- संसाधनों को मानव और गैर-मानव में वर्गीकृत करने,
- संसाधनों की विशेषताओं का वर्णन करने,
- संसाधनों के प्रबंधन की आवश्यकता को स्पष्ट करने, और
- प्रबंधन प्रक्रिया का विश्लेषण करने में।

4.1 परिचय

प्रतिदिन हम विभिन्न कार्यकलाप करते हैं। आप किसी एक कार्यकलाप के बारे में सोचिए, जो आप करते हैं, आप देखेंगे कि उस कार्यकलाप को करने के लिए आपको निम्न में से एक या अधिक की आवश्यकता होगी –

- समय
- ऊर्जा
- आवश्यक सामग्री खरीदने हेतु धनराशि
- ज्ञान
- रुचि/उत्प्रेरण
- कौशल/क्षमताएँ/रुझान
- भौतिकी सामग्री, जैसे – पेपर, पेन, पेंसिल, रंग आदि
- जल, वायु
- विद्यालय भवन

समय, ऊर्जा, धनराशि, ज्ञान, रुचि, कौशल, सामग्री इत्यादि सब संसाधन हैं। संसाधन वह होते हैं जिनका हम किसी कार्यकलाप को करने में उपयोग करते हैं। ये हमें लक्ष्य प्राप्ति में सहायता करते

हैं। आपको किसी विशेष कार्यकलाप के लिए अन्य संसाधनों की तुलना में किसी एक संसाधन की अधिक आवश्यकता हो सकती है। पिछले अध्याय में आपने अपनी क्षमताओं के बारे में पढ़ा है। ये आपके संसाधन हैं।

कोई भी चीज़ जिसका उपयोग हम नहीं करते, संसाधन नहीं है। उदाहरण के लिए एक साइकिल जिसका काफी समय से उपयोग नहीं किया गया है और आपके घर में बेकार पड़ी है आपके लिए संसाधन नहीं है। लेकिन यह किसी और के लिए संसाधन हो सकती है।

यदि आप संसाधनों की उक्त सूची को पुनः देखेंगे तो आप पाएँगे कि संसाधनों को निम्नलिखित रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है–

- मानव संसाधन
- गैर-मानव संसाधन अथवा भौतिक सामग्री
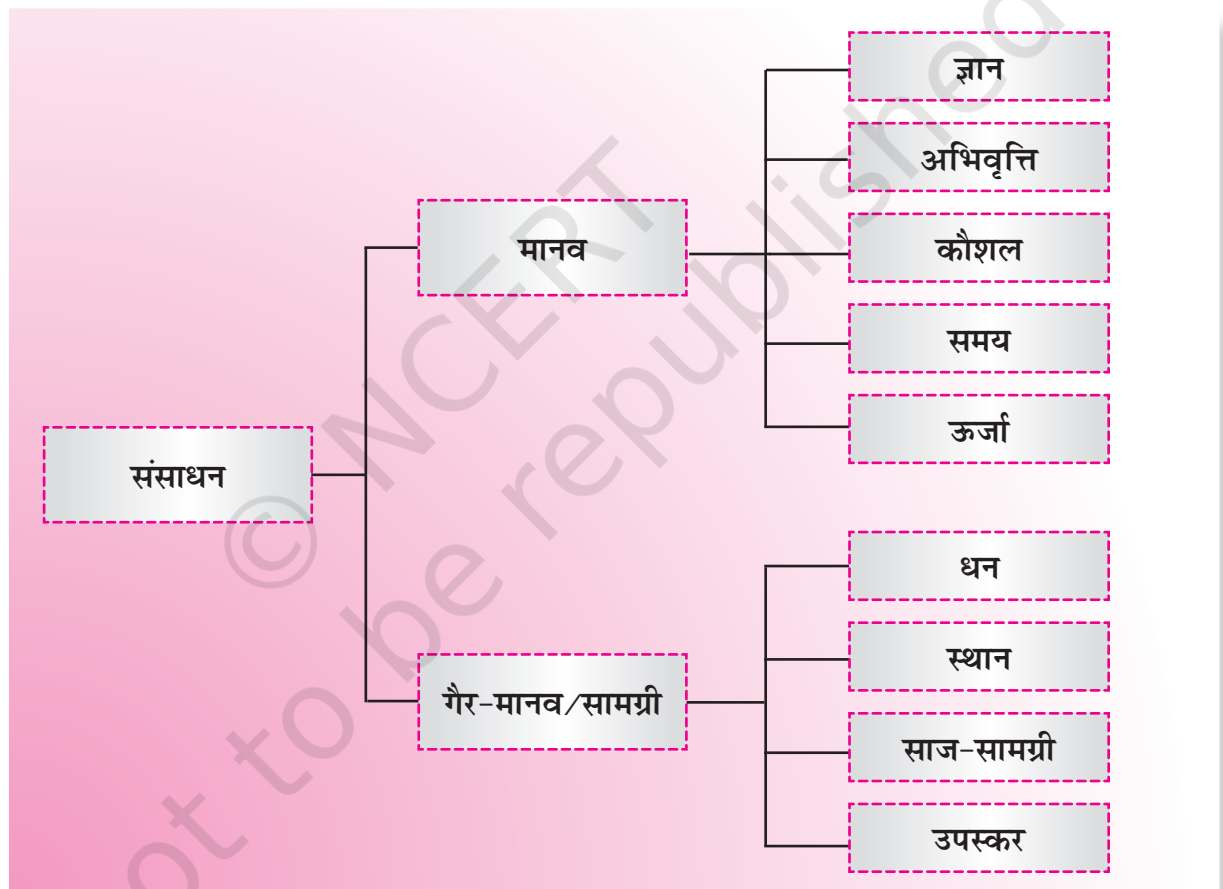
संसाधन

संसाधनों को विभिन्न प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है–

- मानव/गैर-मानव संसाधन
- व्यक्तिगत/साझे संसाधन
- प्राकृतिक/सामुदायिक संसाधन

अब हम इन वर्गीकरणों में प्रत्येक के बारे में पढ़ेंगे।

unit1_30june_asCorrected.indd 48 11-09-2017 12:06:41 PM

मानव और गैर-मानव संसाधन

मानव संसाधन

किसी भी कार्यकलाप को करने के लिए मानव संसाधन प्रमुख होते हैं। ये संसाधन प्रशिक्षण और आत्म विकास के माध्यम से विकसित किए जा सकते हैं। उदाहरण के लिए, किसी क्षेत्र/कार्य के संबंध में ज्ञान अर्जित किया जा सकता है, कौशल का विकास किया जा सकता है जिससे आपको रुझान को विकसित करने में सहायता मिलेगी। आइए हम मानव संसाधन के बारे में विस्तार से पढ़ते हैं–

(क) *ज्ञान*– इस संसाधन का उपयोग व्यक्ति जीवन भर करता है और यह किसी भी कार्यकलाप को सफलतापूर्वक करने के लिए पहली आवश्यकता है। एक रसोइए को खाना बनाने से पूर्व इस बात का ज्ञान होना चाहिए कि कुकिंग गैस स्टोव अथवा चूल्हा कैसे जलाना है। एक अध्यापक जिसे अपने विषय का संपूर्ण ज्ञान नहीं है, एक लोकप्रिय अध्यापक नहीं बन सकता। व्यक्ति को जीवन पर्यन्त ज्ञान प्राप्त करने के लिए हमेशा तैयार रहना चाहिए।

ख) *उत्प्रेरण/रुचि*– एक कहावत है कि ''जहाँ चाह वहाँ राह''। इसका तात्पर्य है कि किसी कार्य को करने के लिए कामगार को प्रेरित होना चाहिए और कार्य में उसकी रुचि होनी चाहिए। उदाहरणार्थ यदि एक विद्यार्थी अन्य संसाधन उपलब्ध होने पर भी यदि किसी कार्य को सीखने का इच्छुक नहीं है तो वह बहाने बनाता रहेगा/रहेगी और कार्य को पूरा नहीं करेगा/करेगी। हम अपनी प्रेरणा के अनुरूप नृत्य, पेंटिंग, कथा साहित्य पठन, कला, शिल्प और अन्य शौक पूरा करने के प्रयत्न करते हैं।

(ग) *कौशल/क्षमताएँ/रुझान*– सभी व्यक्ति समस्त कार्यकलापों को करने में कुशल नहीं हो सकते। हममें से प्रत्येक का किसी एक विशेष क्षेत्र में रुझान होता है। अतः हम इन क्षेत्रों में अन्य क्षेत्रों की तुलना में बेहतर ढंग से कार्यकलापों का निष्पादन कर सकते हैं। उदाहरण के लिए अलग-अलग लोगों द्वारा बनाए गए अचार और चटनी का स्वाद उनके कौशल के अनुसार अलग-अलग होगा। फिर भी, हम उस कौशल को जो हममें नहीं है, सीख कर और प्रशिक्षण द्वारा प्राप्त कर सकते हैं।

(घ) *समय*– यह संसाधन सभी के लिए समान रूप से उपलब्ध होता है। एक दिन में 24 घंटे होते हैं और प्रत्येक व्यक्ति इसे अपने तरीके से व्यतीत करता है/करती है। बीता हुआ समय कभी वापस नहीं आता। अतः यह सबसे अधिक बहुमूल्य संसाधन है। विशेष अवधि में समय प्रबंधन करना और लक्ष्य प्राप्त करना अत्यधिक महत्वपूर्ण है। हमें निरंतर योजना बनानी चाहिए और वांछित कार्य को पूरा करने के लिए उपलब्ध समय का उपयोग करने में सक्षम होना चाहिए।

समय पर तीन आयामों की दृष्टि से विचार किया जा सकता है – कार्य का समय, कार्य न करने का समय, विश्राम और खाली समय। हमें अपने लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए समय को इन तीन आयामों के बीच संतुलित करना सीखना चाहिए। जब व्यक्ति इन तीनों आयामों को संतुलित करना सीख जाता है तो इससे उसको शारीरिक रूप से स्वस्थ रहने, भावात्मक रूप से दृढ़ रहने और बौद्धिक रूप से सतर्क रहने में सहायता मिलती है। आपको उन प्रबलतम अवधियों के बारे में पता होना चाहिए जब आप सर्वोत्तम रूप से कार्य करने और अपने लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए इस बहुमूल्य संसाधन का उपयोग करने में सक्षम होते हैं।

(ङ) *ऊर्जा*– व्यक्तिगत वृद्धि और शारीरिक निष्पादन क्षमता को बनाए रखने के लिए ऊर्जा अनिवार्य है। ऊर्जा का स्तर प्रत्येक व्यक्ति में उसके शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक स्थिति,

व्यक्तित्व, आयु, पारिवारिक पृष्ठभूमि और उसके रहन-सहन के स्तर के अनुसार भिन्न-भिन्न होता है। ऊर्जा संरक्षण और इसके प्रभावी उपयोग के लिए व्यक्ति को कार्यकलाप के बारे में सावधानीपूर्वक विचार करना चाहिए और उसकी योजना बनानी चाहिए ताकि कार्य को सक्षमतापूर्वक पूरा किया जा सके।

गैर-मानव संसाधन

(क) धन – हम सभी को इस संसाधन की आवश्यकता होती है लेकिन यह सभी में समान रूप से वितरित नहीं होता। कुछ लोगों के पास यह संसाधन अन्य लोगों की तुलना में कम होता है। हमें यह याद रखना चाहिए कि धन एक सीमित संसाधन है और अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए हमें इसको विवेकपूर्ण ढंग से खर्च करना चाहिए।

(ख) भौतिक संसाधन – स्थान, फ़र्नीचर, कपड़े, स्टेशनरी, खाद्य वस्तुएँ इत्यादि कुछ भौतिक संसाधन हैं। हमें कार्यकलाप करने के लिए इन संसाधनों की आवश्यकता होती है।

व्यक्तिगत और साझे संसाधन

(क) **व्यक्तिगत संसाधन** – ये वे संसाधन हैं जो व्यक्ति के पास केवल निजी उपयोग के लिए उपलब्ध होते हैं। ये मानव या गैर-मानव संसाधन हो सकते हैं। आपका अपना कौशल, ज्ञान, समय, स्कूल बैग, आपके कपड़े व्यक्तिगत संसाधनों के कुछ उदाहरण हैं।

(ख) **साझे संसाधन** – ये वे संसाधन हैं जो समुदाय/सोसाइटी के अनेकों सदस्यों के लिए उपलब्ध होते हैं। साझा संसाधन प्राकृतिक अथवा समुदाय आधारित हो सकते हैं।

प्राकृतिक और सामुदायिक संसाधन

(क) **प्राकृतिक संसाधन** – प्रकृति में उपलब्ध संसाधन प्राकृतिक संसाधन होते हैं। जल, पहाड़ वायु इत्यादि प्राकृतिक संसाधन हैं। ये हम सभी के लिए उपलब्ध होते हैं। अपने पर्यावरण की सुरक्षा के लिए हम सभी का दायित्व है कि हम इनका उपयोग विवेकपूर्ण ढंग से करें।

(ख) **सामुदायिक संसाधन** – ये संसाधन किसी व्यक्ति को समुदाय/सोसाइटी के सदस्य के रूप में उपलब्ध होते हैं। ये सामान्यतः सरकार द्वारा प्रदान किए जाते हैं। ये मानव अथवा गैर-मानव हो सकते हैं। सरकारी अस्पतालों द्वारा दी जाने वाली परामर्श सेवाएँ, डॉक्टर, सड़कें, पार्क और डाकघर सामुदायिक संसाधनों के कुछ उदाहरण हैं। प्रत्येक व्यक्ति को इन संसाधनों का इष्टतम उपयोग करने का प्रयास करना चाहिए और इनके रख-रखाव के प्रति अपनी ज़िम्मेदारी समझनी चाहिए।

संसाधनों की विशेषताएँ

यद्यपि हम संसाधनों को विभिन्न प्रकार से वर्गीकृत कर सकते हैं, लेकिन उनमें कुछ समानताएँ भी होती हैं। संसाधनों की कुछ विशेषताएँ निम्नलिखित हैं –

(क) **उपयोगिता** – यह संसाधनों की सबसे अनिवार्य विशेषता है। उपयोगिता का अर्थ है कि कोई संसाधन व्यक्ति की लक्ष्य प्राप्ति में कितना महत्वपूर्ण अथवा उपयोगी है। संसाधन उपयोगी

क्रियाकलाप 1

स्वयं के बारे में सोचें और अपने पास उपलब्ध मानव संसाधनों की सूची बनाएँ। इस पर विचार करने के लिए निम्नलिखित दिशा-निर्देशों का उपयोग करें –

- ज्ञान – किन क्षेत्रों के बारे में आपको जानकारी है।
- उत्प्रेरण/रुचि – किन कार्यकलापों को करने में आपको सबसे अधिक आनंद आता है।
- कौशल/क्षमताएँ/रुझान – आप किस काम को सबसे अच्छी तरह से कर सकते हैं।
- समय – दिन की कौन-सी अवधियों में आप सबसे अधिक सक्रिय रहते हैं।
- ऊर्जा –क्या आप अधिकतर ऊर्जायुक्त अथवा रुचिहीन/थका हुआ महसूस करते हैं।

है या नहीं यह लक्ष्य और स्थिति पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिए गाय के गोबर को बेकार माना जाता है। लेकिन इसका उपयोग ईंधन के रूप में और ह्यूमस (खाद) बनाने के लिए भी किया जा सकता है। परिवार अथवा समुदाय में उपलब्ध महत्वपूर्ण संसाधनों के उचित उपयोग से अत्यधिक संतुष्टि मिलती है।

(ख) **सुलभता** – पहला, कुछ संसाधन अन्य संसाधनों की तुलना में अधिक सरलता से उपलब्ध होते हैं। दूसरे, कुछ लोगों को अन्य लोगों की तुलना में संसाधन अधिक सरलता से उपलब्ध होते हैं। तीसरे, संसाधनों की उपलब्धता समय के साथ बदलती रहती है। अतः हम कह सकते हैं कि संसाधनों की सुलभता प्रत्येक व्यक्ति के अनुसार और समय-समय पर बदलती रहती है। जैसे– प्रत्येक परिवार में धन संसाधन के रूप में उपलब्ध रहता है। कुछ लोगों के पास तो अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पर्याप्त धन होता है जबकि अन्य लोगों के पास सीमित बजट होता है। उपलब्ध धनराशि की मात्रा भी माह के आरंभ की तुलना में माह के अंत में भिन्न होती है।

(ग) **विनिमेयता** – लगभग सभी संसाधनों के स्थानापन्न या विकल्प होते हैं। यदि एक संसाधन उपलब्ध नहीं होता तो इसके स्थान पर दूसरे को प्रतिस्थापित किया जा सकता है। जैसे– यदि आपकी स्कूल बस आपको लेने के लिए समय पर नहीं आती है, तब आप अपनी कार, ट्रैक्टर, बैलगाड़ी अथवा स्कूटर से स्कूल जा सकते हैं। अतः एक ही कार्य कई संसाधनों द्वारा किया जा सकता है।

(घ) **प्रबंधनीय** – संसाधनों का प्रबंधन किया जा सकता है। चूँकि संसाधन सीमित होते हैं अतः इनका प्रबंधन उचित प्रकार से और प्रभावी ढंग से किया जाना चाहिए ताकि इनका इष्टतम उपयोग किया जा सके। संसाधनों का उपयोग इस प्रकार किया जाना चाहिए कि हमें न्यूनतम संसाधनों के उपयोग से अधिकतम लाभ प्राप्त हो। जैसे हमें कपड़े धोने के लिए तीन-चार बाल्टी पानी का उपयोग नहीं करना चाहिए, अगर हम उन कपड़ों को एक बाल्टी पानी से धो सकते हैं।

संसाधनों का प्रबंधन

यह नोट करना महत्वपूर्ण है कि कोई भी संसाधन असीमित नहीं है। सभी संसाधन सीमित हैं। अपने उद्देश्यों को शीघ्र और दक्षता से पाने के लिए उन संसाधनों का प्रभावी ढंग से उपयोग करना चाहिए। अतः संसाधनों का दुरुपयोग नहीं करना चाहिए और उन्हें बर्बाद भी नहीं करना चाहिए। इसलिए लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए संसाधनों का प्रभावी प्रबंधन अत्यंत आवश्यक है।

संसाधनों के प्रबंधन का अर्थ है, उपलब्ध संसाधनों का सर्वोत्तम उपयोग करना। जैसे– हर किसी के पास दिन में 24 घंटे होते हैं। जहाँ कुछ लोग प्रतिदिन की समय-सारणी बनाते हैं और अपने लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए प्रत्येक घंटे का उपयोग करते हैं, वहीं अन्य अपना समय नष्ट करते हैं और पूरे दिन में कुछ भी उत्पादक कार्य नहीं कर पाते।

संसाधनों के प्रबंधन में संसाधन प्रबंधन प्रक्रियाओं का कार्यान्वयन शामिल है जिसमें नियोजन, आयोजन, कार्यान्वयन, नियंत्रण और मूल्यांकन सम्मिलित हैं। हम इनके बारे में विस्तार से निम्नलिखित भाग में पढ़ेंगे।

प्रबंधन प्रक्रिया

जैसा कि ऊपर बताया गया है कि प्रबंधन प्रक्रिया के पाँच पहलू हैं– नियोजन, आयोजन, कार्यान्वयन, नियंत्रण और मूल्यांकन।

(क) **नियोजन –** यह किसी भी प्रबंधन प्रक्रिया का पहला चरण है। इससे हमें लक्ष्यों की प्राप्ति तक पहुँचने के मार्ग की कल्पना करने में सहायता मिलती है। दूसरे शब्दों में, नियोजन का अर्थ है उपलब्ध संसाधनों के उपयोग द्वारा निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु, कार्रवाई करने के लिए योजना बनाना।

नियोजन में कार्यविधि का चुनाव किया जाता है। लक्ष्य की प्राप्ति हेतु प्रभावी ढंग से योजना बनाने के लिए आपको निम्नलिखित चार मूलभूत प्रश्न अवश्य पूछने चाहिए। इन प्रश्नों के उत्तर से आपको योजना बनाने में सहायता मिलेगी।

1. हमारी वर्तमान स्थिति क्या है? इसमें वर्तमान स्थिति का निर्धारण करना शामिल है। इसके लिए यह विश्लेषण करना होता है कि आपके पास अभी क्या है और भविष्य में आप क्या पाना चाहेंगे।
2. हम कहाँ पहुँचना चाहते हैं? इसमें वर्तमान और भावी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए उन विशिष्ट उद्देश्यों अथवा लक्ष्यों का निर्धारण किया जाता है जिन्हें हम प्राप्त करना चाहते हैं।
3. अंतर (अंतराल) – यह हमारी वर्तमान स्थिति और वांछित स्थिति के बीच का अंतर है। हमें हमारे लक्ष्य की प्राप्ति के लिए इस अंतर को समाप्त करना है।
4. हम अपने वांछित उद्देश्यों की प्राप्ति कैसे कर सकते हैं? इस प्रश्न का उत्तर देने से आपको यह निर्णय करने में सहायता मिलेगी कि इस अंतर को कैसे समाप्त करना है। इसमें उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु योजना बनाना शामिल है।

unit1_30june_asCorrected.indd 52 11-09-2017 12:06:41 PM
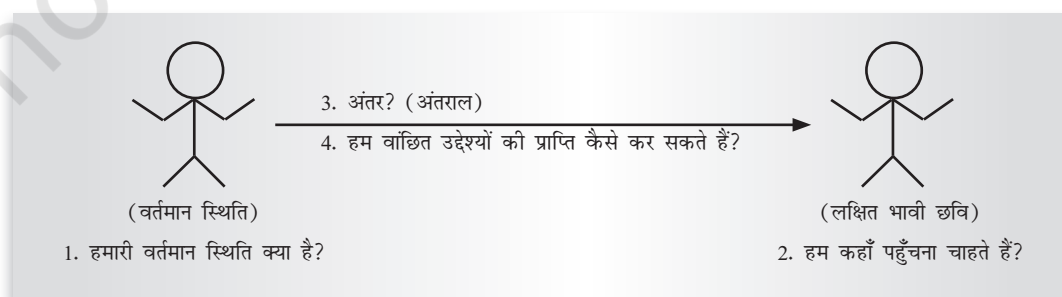
- *नियोजन के चरण* – निम्नलिखित आयोजना के बुनियादी चरण हैं –
  1. समस्या को पहचानना
  2. विभिन्न विकल्पों को पहचानना
  3. विकल्पों में से उचित विकल्प का चयन करना
  4. योजना पर कार्य करना/योजना को कार्यान्वित करना
  5. परिणामों को स्वीकार करना

उदाहरण के लिए, आपकी वार्षिक परीक्षा के लिए केवल एक माह बाकी है और आपने पाठ्यक्रम दोहराया नहीं है (वर्तमान स्थिति); आपका उद्देश्य है अच्छे अंक प्राप्त करना (लक्ष्य)। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए आपको निश्चित समय अवधि (अंतराल) में पाँच विषयों का अध्ययन करना है। आप इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु तरीका खोजेंगे (कार्य योजना बनाएँगे) जिसमें प्रत्येक विषय का अध्ययन करने के लिए आपके द्वारा लगाए जाने वाले घंटों की संख्या, विषयों की प्राथमिकता निर्धारण करना, अन्य कार्यकलाप कम करना इत्यादि शामिल होगा।

क्रियाकलाप 2

उन संसाधनों की सूची बनाएँ जिनकी आपको अच्छे अंक प्राप्त करने और बेहतर अध्ययन करने के लिए आवश्यकता है। अपनी सूची की तुलना अन्य शिक्षार्थियों की सूची से करें।

____

____

____

____

____

(ख) **आयोजन** – इसमें योजनाओं का प्रभावी और सक्षम तरीके से कार्यान्वयन करने हेतु समुचित संसाधनों को एकत्र और व्यवस्थित किया जाता है। यदि हम उक्त उदाहरण को लेते हैं तो आप उन सभी संसाधनों का संघटन और व्यवस्था करेंगे जिनकी आपको अध्ययन करने और अच्छे अंक प्राप्त करने के लिए आवश्यकता है। इसमें शामिल कुछ संसाधन हैं – पुस्तक, नोट्स, अध्ययन हेतु स्थान, प्रकाश, स्टेशनरी, ऊर्जा, समय।

(ग) **कार्यान्वयन** – इस अवस्था में तैयार योजना को कार्यान्वित किया जाता है। उक्त उदाहरण में, आप उपलब्ध संसाधनों (जैसे पुस्तक, स्टेशनरी, नोट्स आदि) से अध्ययन आरंभ करके योजना को कार्यान्वित करेंगे।

(घ) **नियंत्रण** – इसमें यह सुनिश्चित किया जाता है कि आपके कार्यकलाप वांछित फल प्रदान कर रहे हैं। अन्य शब्दों में, जिस योजना को आपने कार्यान्वित किया है उससे वांछित परिणाम मिल रहे हैं। नियंत्रण से कार्यकलापों के परिणामों की निगरानी करने में सहायता मिलती है और यह सुनिश्चित होता है कि योजनाएँ सही ढंग से कार्यान्वित की जा रही हैं। नियंत्रण महत्वपूर्ण है क्योंकि यह फीडबैक (प्रतिपुष्टि) प्रदान करना है और त्रुटियाँ होने से

रोकता है। फीडबैक से आपको अपनी कार्ययोजना में संशोधन करने में सहायता मिलती है ताकि आप लक्ष्य की प्राप्ति कर सकें। अतः जब आप अपनी अध्ययन योजना को कार्यान्वित कर रहे हों और फिर भी नियत अध्याय को टीवी देखने के कारण पूरा नहीं कर पाते तो इससे आपको यह फीडबैक मिलता है कि आपको अपनी अरुचि को कम करना चाहिए। आप अध्ययन के समय टीवी नहीं देखेंगे, मित्रों के साथ नहीं खेलेंगे अथवा बात नहीं करेंगे क्योंकि यह आपकी सुनिश्चित योजना (अर्थात् योजना में निर्धारित घंटों के अनुसार अध्ययन) के परिणाम को प्रभावित कर सकता है।

(ङ) **मूल्यांकन –** अंतिम अवस्था में, योजना को कार्यान्वित करने के पश्चात् प्राप्त परिणामों का मूल्यांकन किया जाता है। कार्य के अंतिम परिणाम की वांछित परिणाम से तुलना की जाती है कार्य की सभी सीमाओं और विशेषताओं को नोट किया जाता है ताकि लक्ष्य की प्रभावी ढंग से प्राप्ति हेतु भविष्य में उनका उपयोग किया जा सके। अध्ययन के उदाहरण को लेते हुए मूल्यांकन वह है जो आप परीक्षा की जाँच की गई उत्तर पुस्तिकाओं के मिलने के पश्चात् करते हैं। आप अपनी अंकित उत्तर पुस्तिकाओं का मूल्यांकन परीक्षा हेतु की गई अपनी तैयारी तथा आपके द्वारा अपेक्षित परिणामों के अनुसार करते हैं। यदि किसी विषय में आपके अंक आपकी अपेक्षा से कम आते हैं तो आप उसका कारण जानने की कोशिश करते हैं। साथ ही, आप अपनी उन क्षमताओं को जानने का भी प्रयास करते हैं जिनसे आपको अन्य विषयों में अच्छे अंक प्राप्त करने में सहायता मिली। तत्पश्चात् आप इन क्षमताओं का उपयोग अपनी कमियों को दूर करने के लिए करते हैं ताकि आपको परीक्षा में अगली बार अच्छे अंक मिलें।

इस अध्याय में जिन विभिन्न संसाधनों पर चर्चा की गई है, उनके अतिरिक्त कुछ अन्य गैर-मानव संसाधन हैं जो हमारे दैनिक जीवन का अभिन्न अंग हैं। ऐसा ही एक संसाधन फैब्रिक्स (कपड़ा) है। आगामी अध्याय में विभिन्न प्रकार के कपड़ों (फैब्रिक्स) तथा उनकी विशेषताओं के बारे में बताया गया है जिनका हम प्रायः प्रयोग करते हैं।

प्रमुख शब्द

संसाधन, मानव संसाधन, गैर-मानव संसाधन, नियोजन, आयोजन, कार्यान्वयन, नियंत्रण, मूल्यांकन।

क्रियाकलाप 3

आप कक्षा 12 के छात्रों के लिए विदाई पार्टी का आयोजन करना चाहते हैं। अपने संसाधनों को पहचानें और पार्टी का आयोजन करने में प्रत्येक अवस्था पर ध्यान में रखे जाने वाले पहलुओं के बारे में जानकारी दें।

कक्षा 12 के छात्रों के लिए विदाई पार्टी						
क्र.सं.	**उपलब्ध संसाधन**	**नियोजन**	**आयोजन**	**कार्यान्वयन**	**नियंत्रण**	**मूल्यांकन**
1.	मानव – गैर-मानव	स्थान? मेन्यू? (व्यंजन सूची)	उत्तरदायित्व का विभाजन	(क) स्थल सजाना? (ख) भोजन रखना?	यह जाँच करना कि सजावट योजना के अनुसार जा रही है अथवा नहीं?	मूल्यांकन करें कि स्थल अच्छा दिखाई दे रहा है अथवा नहीं?
2.						
3.						
4.						
5.						
6.						
7.						

समीक्षात्मक प्रश्न

1. संसाधन को परिभाषित कीजिए।
2. संसाधनों को तीन विभिन्न प्रकारों में वर्गीकृत करें और प्रत्येक संसाधन की परिभाषा बताएँ और प्रत्येक के दो-दो उदाहरण दें।
3. संसाधनों का प्रबंधन क्यों किया जाना चाहिए?
4. प्रबंधन प्रक्रिया के चरणों की जानकारी दीजिए और प्रत्येक चरण को स्पष्ट करने हेतु एक-एक उदाहरण दीजिए।

प्रायोगिक कार्य 4

संसाधनों का प्रबंधन - समय, धन, ऊर्जा और स्थान

(क) प्रातः 6.00 बजे से अपने दिनभर के क्रियाकलाप को लिखें।

घंटे	क्रियाकलाप

(ख) वार्षिक परीक्षा हेतु केवल एक सप्ताह शेष है। प्रत्येक दिन के लिए अध्ययन के घंटों की संख्या दर्शाते हुए समय योजना तैयार करें। सोमवार हेतु एक उदाहरण दिया गया है।

दिन	घंटे															
	7–8	8–9	9–10	10–11	11–12	12– 1	1-2	2-3	3-4	4-5	5-6	6-7	7-8	9-10	10-11	11 से प्रातः 6
सोम	विज्ञान अध्याय 3		गणित अध्याय 4–5		अवकाश	दोहराव	दोपहर का भोजन	सामाजिक विज्ञान अध्याय 3		सोना	अँग्रेजी अध्याय 5, 6		हिंदी अध्याय 4	दोहराव	रात का भोजन	सोना
मंगल																
बुध																
गुरू																
शुक्र																
शनि																
रवि																

अध्याय
5

कपड़े — हमारे आस-पास

उद्देश्य

इस अध्याय को पूरा करने के बाद शिक्षार्थियों को निम्नलिखित ज्ञान हासिल होगा –

- कपड़ों की विविधता पर चर्चा करने का ज्ञान,
- सामान्य रूप से अपने चारों ओर दिखाई देने वाले कपड़ों के बारे में बताने और उनका वर्गीकरण करने का ज्ञान,
- सूत और कपड़ा निर्माण की संकल्पना का ब्यौरा देने का ज्ञान,
- कपड़ों के प्रत्येक समूह की विशेषता बताने का ज्ञान, और
- विशिष्ट उपयोग हेतु वस्त्र उत्पादों का सोच-समझकर चयन करने का ज्ञान।

5.1 परिचय

कपड़े हमारे चारों ओर हैं। वे हमारे जीवन का महत्वपूर्ण भाग हैं। कपड़े आराम और ऊष्मा प्रदान करते हैं। इनमें विभिन्न रंग, सजावट शैलियाँ और बुनावट होती हैं। किसी एक दिन के कार्यकलाप के बारे में सोचें और याद करें कि स्पर्श आपको कैसा लगता है। बिस्तर से उठने पर आपके चादर और तकिए के लिहाफ कपड़े ही होते हैं। जब आप स्कूल के लिए तैयार होते हैं, नहाने के बाद जिस तौलिए का उपयोग करते हैं, वह एक नरम और सोखता कपड़ा ही होता है, आप स्कूल की ड्रेस पहनते हैं, वह भी एक विशेष प्रकार का कपड़ा ही होता है। जिस स्कूल बैग में आप अपनी किताबें और अन्य वस्तुएँ ले जाते हैं, वह कपड़ा ही है, लेकिन इसकी बनावट अलग प्रकार की होती है वह अलग तरह से बुना होता है। यह थोड़ा सख्त और खुरदरा होता है, लेकिन भार उठाने के लिए काफी मज़बूत होता है। आप अपना घर देखें, लगभग सभी स्थानों पर कपड़े पाएँगे, पर्दों से लेकर किचन के डस्टर तक और पोंछे से लेकर दरी तक। कपड़े, वजन और मोटाई में विभिन्न प्रकार के होते हैं तथा उनके चयन का संबंध – उनके उपयोग के अनुसार होता है।

हाथ में कोई विशेष कपड़ा लेकर उसे खोलते हैं तो आप अधिकांश में धागे जैसी संरचनाएँ निकाल सकते हैं। ये एक-दूसरे के समकोण पर अंतर्ग्रथित अथवा आपस में गुंथे हुए होते हैं जैसे
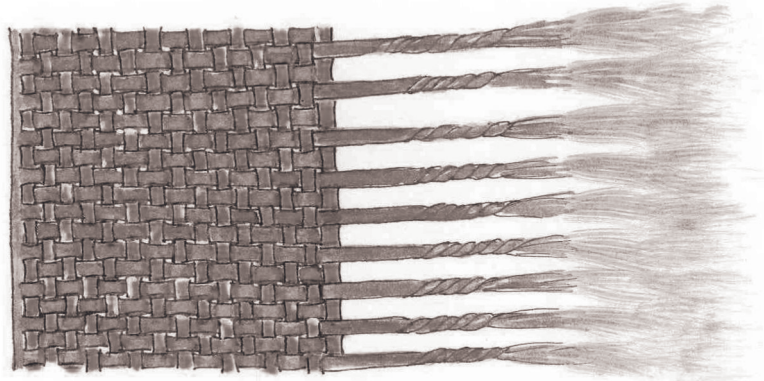
चित्र 1 – कपड़े से धागे तक

ऊनी कार्डिगन अथवा टी-शर्ट में होता है। इनकी गाँठ बँधी हुई होती है जैसे जाल अथवा लेस में होता है। इन्हें **सूत** कहा जाता है। अगर आप सूत को खोलने का प्रयास करते हैं तो आप छोटे और स्पष्ट पतले धागे जैसी संरचनाएँ पाते हैं। ये रेशे होते हैं। ये रेशे सभी वस्त्रों की मूल इकाई होते हैं। रेशे, सूत और कपड़ा इन सभी वस्तुओं को **वस्त्र उत्पाद** अथवा वस्त्र कहा जाता है। एक बार तैयार होने के बाद आगे कई बार कपड़े को संसाधित किया जाता है, संसाधित करने से कपड़े की बनावट में सुधार आ जाता है (सफ़ाई, चमकाना, रंग करना) अथवा यह कपड़े को अधिक चमकीला बना देता है अथवा इसके स्पर्श की गुणवत्ता को बढ़ा देता है, और इसे टिकाऊ बना देता है। इसे **परिष्करण** (फ़िनिशिंग) कहा जाता है। आजकल बाज़ार में कई प्रकार के कपड़े उपलब्ध हैं, और प्रत्येक की अलग-अलग उपयोगिता है। प्रयोग किया जाने वाला कपड़ा कैसा है, इसका अनुरक्षण कैसे किया जाए, यह रेशा, सूत, कपड़ा और परिष्करण जैसे विभिन्न कारकों पर निर्भर करता है।

क्रियाकलाप 1

घर, दर्ज़ी की दुकान, कपड़े की दुकान अथवा मित्रों से विभिन्न प्रकार के कपड़ों (फैब्रिक) के नमूने एकत्र करें, प्रत्येक कपड़े का नाम लिखें।

5.2 रेशे के गुण

रेशे के गुण कपड़े के गुणों को निर्धारित करते हैं। रेशा सचमुच महत्वपूर्ण और उपयोगी हो, इसके लिए उसे भारी मात्रा में उपलब्ध होना चाहिए और किफायती होना चाहिए। सबसे अनिवार्य गुण है उसका कताई योग्य होना। यह इसको सूत और कपड़े में सरलता से परिवर्तित करने वाली अनिवार्य विशेषता है। जैसे लंबाई, मजबूती, नम्यता और रेशे की ऊपरी बनावट है। उपभोक्ता के संतोष की दृष्टि से रंग, चमक, भार, आर्द्रता, डाई अवशोषण, लोच जैसे गुण इसमें वांछनीय होते हैं। कपड़े की देखभाल और अनुरक्षण को प्रभावित करने वाले कारक जैसे अपघर्षण, प्रतिरोधक क्षमता, रसायन, साबुन, डिटर्जेंट, ताप आदि का प्रभाव और जैविक जीवों के प्रति प्रतिरोधक क्षमता भी उपभोक्ता के लिए महत्वपूर्ण है।

5.3 वस्त्र रेशों का वर्गीकरण

वस्त्र रेशों को उनके उद्‌भव के आधार पर (जैसे प्राकृतिक अथवा मानव निर्मित अथवा विनिर्मित), सामान्य रसायन प्रकार के आधार पर (जैसे– सेल्युलोसिक, प्रोटीन अथवा सिंथेटिक), जातिगत प्रकार के आधार पर (जैसे– जंतु के रोम अथवा जंतु स्राव) और सामान्य ट्रेड नाम के आधार पर (जैसे– पोलीएस्टर, जैसे– टेरीन अथवा डेकरान) वर्गीकृत किया जा सकता है। इसे, कम लंबाई वाला, जैसे– कपास या तंतु, अधिक लंबाई वाला, जैसे रेशम, पोलीएस्टर आदि की कोटि में बाँटा जा सकता है।

प्राकृतिक रेशे

प्राकृतिक रेशे वे होते हैं जो रेशों के रूप में प्रकृति में पाए जाते हैं। प्राकृतिक रेशे चार प्रकार के होते हैं–

(क) *सेलुलोसिक रेशे*

1. सीड हेयर्स – कॉटन, कापोक
2. बास्ट रेशा – लेक्स (लिनेन), हेम्प, जूट
3. लीफ रेशा – अनानास, अगेव (सीसल)
4. नट हस्क रेशा – कॉयर (नारियल)

(ख) *प्रोटीन रेशे*

1. जंतु रोम – ऊन, विशिष्ट बाल (बकरी, ऊँट), फ़र रेशा
2. जंतु स्राव – रेशम

(ग) *खनिज रेशे* – एस्बेस्टस

(घ) *प्राकृतिक रबड़*

विनिर्मित रेशे (अन्य अध्यायों में इन्हें मानव निर्मित रेशा भी कहा गया है)

आप में से अधिकतर लोगों ने कपास का फूल (जिसमें बीज से रेशे चिपके होते हैं) और अत्यधिक लंबे बालों वाली भेड़ देखी होगी। क्या आप यह सोच सकते हैं कि सूत और कपड़ा निर्माण में इनका उपयोग कैसे किया जाता होगा? फिर भी यह समझना कठिन है कि विनिर्मित अथवा सिथेंटिक रेशे कैसे तैयार हुए।

सबसे पहला विनिर्मित रेशा - रेयान, वाणिज्यिक रूप से सन् 1895 में निर्मित किया गया जबकि अन्य अधिकांश रेशे 20वीं सदी के उत्पाद हैं।

रेशम जैसा कोई रेशा बनाने की मानवीय इच्छा से संभवतः रेशा बनाने की संकल्पना उत्पन्न हुई होगी। शायद उन्होंने यह सोचा हो कि – रेशम का कीड़ा जो शहतूत के पत्ते खाता है, उन्हें पचाता है और अपनी तंतु-गंथियों (दो छिद्र) से तरल पदार्थ उगलता है जो ठोस होने पर रेशम का तंतु (फिलामेंट, कोकून) बन जाता है। इस प्रकार सेल्युलोज पदार्थ के पाचन से रेशम जैसा कुछ निर्मित करना संभव है। अतः काफी लंबे समय तक रेयान को कृत्रिम रेशम अथवा केवल कलात्मक (आर्ट) रेशम कहा जाता था।

गैर-तंतुमय सामग्री को तंतुमय प्रकार में बदलकर सबसे पहले विनिर्मित होने वाले रेशों को बनाया गया। ये मुख्यत: सेलुलोसिक पदार्थ, जैसे कपास अपशिष्ट, अथवा लकड़ी की लुगदी से बनाए गए थे। दूसरी कोटि के रेशे को पूरी तरह रसायनों के उपयोग से संश्लेषित किया गया था। कच्चा-माल चाहे कुछ भी हो, इसे तंतुमय रूप देने की प्रक्रिया समान है।

- ठोस कच्चे माल को विशिष्ट श्यानता के तरल में परिवर्तित किया जाता है। ऐसा रासायनिक क्रिया, विलयन, ताप अनुप्रयोग अथवा मिश्रण के कारण हो सकता है। इसे चक्रण घोल (स्पिनिंग सोल्यूशन) कहा जाता है।
- इस घोल को स्पिनरेट – बहुत छोटे छिद्रों वाली सीरीज वाले एक छोटे थिम्बिल आकार के चंचु से ऐसे स्थान में डाला जाता है जिसमें यह ठोस हो जाता है, अथवा पतले तंतुओं के रूप में जम जाता है।
- जब ये तंतु ठोस हो जाते हैं तब इन्हें एकत्र किया जाता है और अधिक सूक्ष्मता तथा अभिविन्यास के लिए ताना जाता है अथवा इनको ताने और/अथवा बहुल विशेषताओं में सुधार करने के लिए इसे पुन: संसाधित किया जाता है।
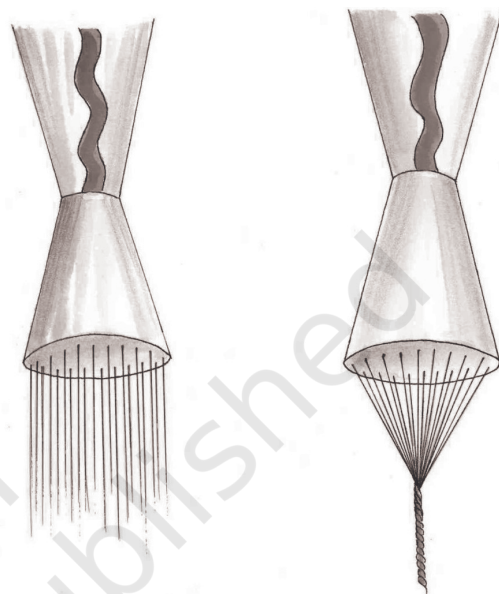
चित्र 2 – स्पिनरेट

विनिर्मित रेशों के प्रकार

(क) **पुनर्योजित सेलुलोसिक रेशा** – रेयान – क्यूप्रैमोनियम, विस्कोस, अति-आर्द्र-मॉड्यूल्स।
(ख) **आशोधित सेलुलोसिक एसीटेट** – सैकेंडरी एसीटेट, ट्राईएसीटेट।
(ग) **प्रोटीन रेशे** – अजलॉन
(घ) **गैर-सेलुलोसिक** (सिंथेटिक) रेशे
 (i) नायलॉन
 (ii) पोलीएस्टर-टेरीलीन, टेरीन
 (iii) एक्रीलिक-ऑर्लान, कैशमीलॉन
 (iv) मोडेक्रीलिक
 (v) स्पैंडेक्स
 (vi) रबड़
(ङ) **खनिज रेशे**
 (i) ग्लास – फाइबर ग्लास
 (ii) मैटेलिक – ल्यूरेक्स

5.4 सूत

सर्जिकल कॉटन, तकियों, रज़ाइयों में भरने के लिए – मैट्रेस और कुशन के लिए वस्त्र जैसे उत्पादों को छोड़कर रेशों के रूप में वस्त्रों का उपयोग हमेशा उपभोक्ता उत्पादों के लिए नहीं किया जा सकता। रेशों को हमारे आस-पास उपलब्ध कपड़ों में परिवर्तित करने के लिए उन्हें बटने की आवश्यकता होती है। यद्यपि कुछ कपड़े जैसे फेल्ट्स अथवा बिना बुने कपड़े ऐसे हैं जिन्हें सीधे रेशों से बनाया जाता है, लेकिन अधिकांश स्थितियों में रेशे मध्यम चरण में संसाधित किए जाते हैं जिन्हें सूत कहा जाता है।

(क) **सूत** को वस्त्र रेशे फ़िलामेंट अथवा ऐसी सामग्री की लंबी-लंबी बटों के रूप में परिभाषित किया जा सकता हैं जो कपड़ा तैयार करने के लिए हर प्रकार के धागों की बुनाई के लिए उपयुक्त हैं।

सूत प्रसंस्करण

प्राकृतिक स्टेपल रेशे से सूत को संसाधित करने को **कताई** कहते हैं यद्यपि कताई संसाधित करने का अंतिम चरण है।

पहले सामान्यतया युवा अविवाहित लड़कियाँ बेहतरीन सूत की कताई करती थीं, क्योंकि उनकी उँगलियाँ दक्ष होती थीं। इसी संदर्भ में अविवाहित महिलाओं के लिए 'स्पिन्सटर' शब्द का उद्भव हुआ।

सूत संसाधित करने अर्थात् रेशे को सूत में परिवर्तित करने के कई चरण हैं।

अब हम उन पर बारी-बारी से विचार करें–

(i) **सफ़ाई** – प्राकृतिक रेशों में सामान्यतया उनके स्रोत के आधार पर कपास में बीज अथवा पत्तियाँ, ऊन में टहनियाँ और ऊर्णस्वेद जैसी बाह्य अशुद्धियाँ होती हैं । इन्हें हटाया जाता है, रेशों को अलग किया जाता है और **लैप्स** (ढीले रेशों की वेल्लित शीट) में परिवर्तित किया जाता है।

(ii) **पूनी बनाना** – लैप्स को खोला जाता है और उन्हें सीधा किया जाता है, इस प्रक्रिया को कार्डिंग (धुनना) और कॉम्बिंग (झाड़न) कहा जाता है। यह प्रक्रिया बालों में कंघी करने तथा उन पर ब्रश करने के समान है। कार्डिंग में रेशों को अलग-अलग किया जाता है और उन्हें सीधा एक-दूसरे के समानांतर रखा जाता है। बेहतरीन कपड़े के लिए लैप्स की धुनाई के बाद उसकी कॉम्बिंग की जाती है। इस प्रक्रिया से छोटी-मोटी अशुद्धियाँ और छोटे-छोटे रेशे दूर हो जाते हैं। तत्पश्चात् लैप को कीप के आकार के यंत्र से निकाला जाता है जिससे इसकी पूनी बनाने में सहायता मिलती है। पूनी खुले रेशों की रस्सी जैसा ढेर होता है जिसका व्यास 2-4 सेंटीमीटर होता है।

(iii) **तनुकरण, तानना और बटना** – अब चूँकि रेशों को लंबे तंतुओं में परिवर्तित कर दिया गया है, इन्हें अपेक्षित आकार में बदले जाने की आवश्यकता होती है। इसे तनुकरण कहा जाता है। समरूपता के लिए कई पूनियों को जोड़ा जाता है। पूनियों को धीरे-धीरे ताना जाता है ताकि वे लंबी और बेहतर हो जाएँ। यदि मिश्रित सूत (जैसे कॉट्सवूल - कॉटन और ऊन) की आवश्यकता होती है तो इस चरण में विभिन्न रेशों की पूनियों को एक साथ जोड़ा जाता है। परिणामत: प्राप्त होने वाली पूनी भी मूल पूनी के समान आकार की ही होती है।

तानने के पश्चात् **पूनी** को रोविंग मशीन (पूनी बनाने वाली मशीन) में डाला जाता है, जहाँ इसे तब तक तनु किया जाता है जब तक यह अपने मूल व्यास 1/4–1/8 के माप की नहीं हो जाती रेशों को जोड़े रखने के लिए इन्हें और बटा जाता है। अगला चरण कताई है। इसमें तंतु को सूत के रूप में अंतिम आकार दिया जाता है। इसे अपेक्षित शुद्धता के लिए और फैलाया जाता है और वांछित मात्रा में गूँथा जाता है और शंकु (कोन) पर लपेट दिया जाता है।
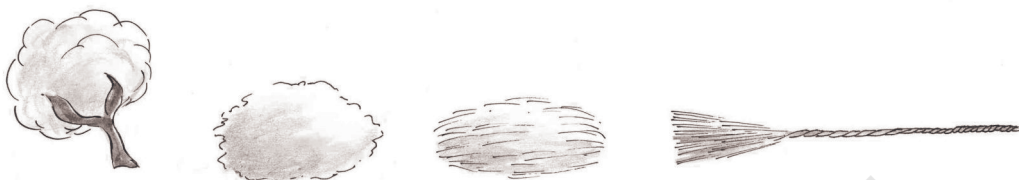
चित्र 3 – कपास की कताई

सभी विनिर्मित रेशों को पहले तंतु के रूप में तैयार किया जाता है। एक तंतु से भी सूत बनाया जा सकता है या बहुत सारे तंतुओं को मिलाकर तथा उन्हें गूंथकर एक सूत बनाया जा सकता है। तंतु को स्टेपल लंबाई के रेशों में काटना भी संभव है। तत्पश्चात् इनकी कताई की जाती है जैसा प्राकृतिक रेशों में किया जाता है। इसे काता हुआ सूत (स्पन सूत) कहा जाता है। जब मिश्रित कपड़ा/सम्मिश्रण की आवश्यकता होती है, जैसे टेरीकोट (टेरीन और सूती) अथवा 'टेरीवूल' (टेरीन और ऊन) अथवा पोलीकोट (रेयान और सूती), तब स्टेपल लंबाई के रेशों की भी आवश्यकता होती है।

सूत संबंधी पारिभाषिक शब्दावली

(क) **सूत संख्या** – आपने धागे की रीलों के लेबल पर कुछ संख्याएँ 20, 30, 40 इत्यादि देखी होंगी। यदि आप ध्यान से देखें और तुलना करें कि धागा कितना अच्छा है, तो आपको पता चलेगा कि अधिक संख्या वाली रील अधिक अच्छी होगी। रेशे के भार और इससे बनाए गए सूत की लंबाई के बीच निश्चित संबंध है। इसे सूत संख्या कहा जाता है, जो सूत की बेहतरी का सूचक है।

(ख) **सूत की बटें** – जब रेशों को सूत में बदला जाता है तो रेशों को साथ जोड़ने के लिए बटें बनाई जाती हैं। इन्हें ट्विस्ट प्रति इंच (टी.पी.आई. या बटें प्रति इंच) कहा जाता है। ढीले बटे हुए सूत मुलायम और अधिक चमकीले होते हैं, जबकि कसकर बटे गए सूत में लकीरें होती हैं, जैसे – जीन्स की डेनिम सामग्री।

(ग) **सूत और धागा** – सूत और धागा मूलतः समान होते हैं। सूत शब्द अक्सर कपड़े के विनिर्माण में उपयोग किया जाता है जबकि धागा वह उत्पाद है जिसे कपड़ों को जोड़ने के लिए उपयोग में लाया जाता है।

5.5 कपड़ा उत्पादन

बाजार में कई प्रकार के कपड़े उपलब्ध हैं। अभी बताया गया कि मूल रेशे की मात्रा (कपास, ऊन इत्यादि) अथवा सूत के प्रकार, के कारण विभिन्न कपड़ों में भिन्नता होती है। जब आप कपड़े को देखेंगे तो आप विभिन्न संरचनाओं में अंतर कर सकेंगे।

अब हम यह चर्चा करेंगे कि इन कपड़ों का उत्पादन कैसे किया जाता है। अधिकांश कपड़े जो आप देखते हैं, सूत से बने होते हैं। फिर भी, कुछ कपड़े सीधे रेशों से ही बनाए जा सकते हैं।

क्रियाकलाप 2

अपनी कमीज़ अथवा ड्रेस, पैंट/जीन्स, तौलिए, जुराबें, जूतों के फीते, फर्श पर बिछाने वाले फेल्ट्स (नमदा) और कॉर्पेट की सामग्री की संरचना में अंतर जानने का प्रयास करें और उन्हें लिखें।

सीधे रेशों से बनाए जाने वाले कपड़े मुख्यत: दो प्रकार के होते हैं – **फ़ेल्ट्स (नमदा)** और बिना बुने अथवा **ब्रॉन्डेड फाइबर** वाले कपड़े। ये कपड़े (धुनाई और काम्बिंग के बाद) रेशों को **मैट (matt)** का रूप देकर बनाए जाते हैं और फिर उन्हें आसंजित किया जाता है। मैट्स को किसी भी मोटाई और आकार का बनाया जा सकता है।

जैसा कि पहले बताया गया है, अधिकांश कपड़ों के निर्माण में मध्यम सूत चरण आवश्यक होता है। कपड़ा बनाने की विधियाँ **बुनाई** तथा कुछ हद तक **गुँथाई (बेर्डिंग)** और **गाँठ लगाना** (नॉटिंग) है।

बुनाई

यह वस्त्र कला का सबसे पुराना रूप है, जिसका उपयोग आरंभ में चटाइयाँ और टोकरियाँ बनाने के लिए किया जाता था। बुने हुए कपड़े में सूत के दो सेटों का उपयोग किया जाता है जिन्हें समकोण पर एक-दूसरे में अंतर्ग्रथित किया जाता है ताकि एक सुसंहत निर्माण किया जा सके। इसे करघा मशीनों पर किया जाता है। सूत के एक सेट को करघे पर लगाया जाता है जो बुने जाने वाले कपड़े की लंबाई और चौड़ाई निर्धारित करता है। इन्हें ताना सूत कहा जाता है। करघे की सहायता से इन सूतों को एक निर्धारित प्रतिबल और समान दूरी पर रखा जाता है। तत्पश्चात् दूसरे सूत को जो पूरक (फिलिंग) सूत है, कपड़ा बनाने के लिए अंतर्ग्रथित किया जाता है। सबसे साधारण अंतर्ग्रथन वह है जब पूरक सूत एकांतर रूप में एक पंक्ति में ताना सूत के ऊपर और नीचे से निकाला जाता है और दूसरी पंक्ति में यह प्रक्रिया उलट हो जाती है। पूरक सूत को ताना सूत की भिन्न संख्या के ऊपर और नीचे एक विनिर्दिष्ट क्रम में निकालकर विभिन्न डिज़ाइन बनाए जा सकते हैं। करघे से जुड़े डोबी और जैक्वार्ड जैसे अटेचमेंट्स से प्रतीकात्मक डिज़ाइन बनाने में भी सहायता मिल सकती है। ताना और पूरक सूत के लिए अलग-अलग रंगों के सूत का उपयोग करने से ये डिज़ाइन और स्पष्ट हो जाते हैं। कुछ डिज़ाइनों में अतिरिक्त सूत का उपयोग किया जाता है, जो ताना अथवा पूरक सूत के समानांतर चलता है। इसे बुनाई के दौरान लूप के रूप में छोड़ दिया जाता है, जिसे बाद में या तो काट दिया जाता है या फिर ऐसे ही रहने दिया जाता है। इसकी बुनावट वैसी ही हो जाती है, जैसी हम तौलिए में देखते हैं (बिना कटा हुआ) अथवा मखमल और कॉर्डुरॉय में देखते है (जिसे काटा गया है)।

बुने हुए कपड़े में सूत की दिशा को **ग्रेन** कहा जाता है। ताना सूत लंबाई के ग्रेन की ओर अथवा **किनारे** की ओर जाता है। पूरक सूत चौड़ाई के ग्रेन अथवा **वेट** (बाना) की ओर जाता है। अत: बुने हुए कपड़े में लंबाई और चौड़ाई को किनारा (सेल्वेज) और बाना (वेट) कहा जाता है। जब आप कपड़ा खरीदते हैं, तब आपने देखा होगा कि इसमें दो कटे हुए और दो आबद्ध किनारे होते हैं। आबद्ध किनारा सेल्वेज है। किनारे की ओर कपड़ा सबसे अधिक मजबूत होता है।

ऊन की बुनाई (निटिंग)

सूत के कम-से-कम एक सेट की इंटरलूपिंग को निटिंग (बुनाई) कहते हैं। यह सपाट कपड़े के लिए दो सलाइयों और गोलाकार कपड़े के लिए चार सलाइयों के उपयोग से हाथ द्वारा भी की जा सकती है। मशीन पर भी निटिंग की जा सकती है। इस प्रक्रिया में निटिंग वाली सलाई अथवा मशीन बेड के साथ-साथ फंदे डाले जाते हैं। प्रत्येक अगली पंक्ति पिछली पंक्ति के फंदों के साथ इंटरलूपिंग से बनाई जाती है। सामग्री की चौड़ाई के साथ-साथ सूत आगे बढ़ता है, और इसलिए इसे **पूरक** अथवा **वेफ़्ट निटिंग** कहा जाता है। निटिंग की इस विधि का प्रयोग उन वस्तुओं को बनाने के लिए किया जाता है जिन्हें बनाते हुए आकार दिया जा सकता है।

औद्योगिक स्तर पर प्रयुक्त होने वाली निटिंग मशीनें बुनाई वाले करघों की तरह होती हैं। उनमें सूत का सेट मशीन पर फिट किया जाता है (तान सूत की तरह)। संगत सूत के साथ इंटरलूपिंग की जाती है। इसे **ताना निटिंग** कहा जाता है। इससे सतत् लंबाई वाली सामग्री बनाई जा सकती है जिसे काट कर सिला जा सकता है जैसा कि वेट निटिंग से बने कपड़ों में नहीं होता।
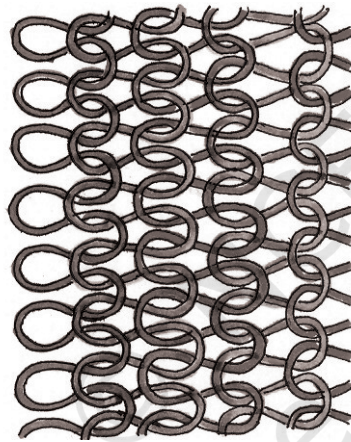
चित्र – 4 वेट निटिंग
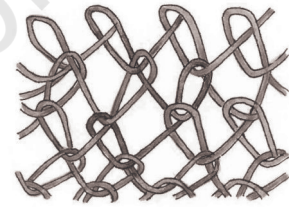
चित्र – 5 वार्प निटिंग

बुने हुए कपड़े तेजी से बनाए जा सकते हैं। क्योंकि उनमें फंदे होते हैं, इसलिए उनमें अधिक सुनम्यता होती है और ये चुस्त वस्तुओं, जैसे– बनियान, अंडरवियर, जुराबों इत्यादि के लिए उपयुक्त होती हैं। ये सरंध्र होते हैं और इनमें वायु मुक्त रूप से आ-जा सकती है तथा इनमें आराम से घूमा-फिरा जा सकता है, इसी कारण ये खेल के दौरान पहने जाने वाले वस्त्रों के लिए सर्वाधिक उपयुक्त हैं।

ब्रेडिंग (गूँथना)

गूँथे गए कपड़ों की सतह विकर्ण रूप में होती है और इन्हें तीन या अधिक सूत को गूँथकर बनाया जाता है, जो एक स्थान से आरंभ होती हैं और अंतर्ग्रथित होने से पूर्व समानांतर होती है। जूते के फीतों, रस्सियों, तारों के लिए रोधन और झालर जैसी वस्तुओं में वेणी (ब्रेड) दिखाई देती है।

नेट्स (जाल)

ये खुले जालीदार कपड़े होते हैं जिनमें सूतों के बीच में बड़े ज्यामितीय अंतराल होते हैं। इन्हें हाथ अथवा मशीन से सूत में आपस में गाँठ बाँधकर (इंटरनॉटिंग करके) बनाया जाता है।

लेसें

यह विवृत कार्य वाला कपड़ा है जिसमें सूत के जाल से बनाए गए सूक्ष्म डिज़ाइन होते हैं। यह सूत बटने, अंतरवयन (आर-पार बुनाई) और गाँठ बाँधने (नॉटिंग) की प्रक्रियाओं के सम्मिश्रण का उत्पाद है।

5.6 वस्त्र परिष्करण

करघे से तैयार होने के पश्चात् यदि आप वस्त्र को देखेंगे तो आप यह नहीं जान पाएँगे कि यह वही वस्त्र है जो आप बाज़ार में देखते हैं। बाज़ार में उपलब्ध सभी कपड़ों का एक या अधिक बार परिष्करण किया जाता है और सफेद कपड़ों को छोड़कर किसी-न-किसी रूप में उनमें रंग मिलाया जाता है।

क्रियाकलाप 3

कपड़ों के पाँच लेबल एकत्र करें। उक्त जानकारी को उससे मिलाएँ जिसका आपने अभी अध्ययन किया है।

परिष्करण वह विधि है जिससे कपड़े का रूप-रंग, इसकी बुनावट अथवा विशिष्ट उपयोग के लिए उसका प्रयोग बदल सकता है। जो परिष्करण अत्यंत आवश्यक माने जाते हैं उन्हें 'नियमित' कहा जाता है। परिष्करण टिकाऊ भी होते हैं (धोने अथवा ड्राइक्लीन करने पर खराब नहीं होते हैं) जैसे डाई करना अथवा इसका नवीकरण करना, जिन्हें धोने पर हट जाने के बाद दोबारा लगाना पड़ता है, जैसे मांड लगाना (स्टार्च करना) अथवा नील चढ़ाना। कार्यों के आधार पर कुछ महत्वपूर्ण परिष्करण इस प्रकार हैं –

- **रूप रंग में परिवर्तन** – सफाई करना (रगड़ना, ब्लीचिंग), सीधा करना और चिकना बनाना (कैलेंडर परिष्कृत करना और टेंटरिंग)।
- **बुनावट में परिवर्तन –** स्टार्च करना अथवा सरेस लगाना, विशेष कैलेंडर परिष्कृत करना।
- **प्रयोग में परिवर्तन –** धोना और पहनना, स्थायी प्रेस, जल विकर्षक अथवा जल रोधक, शलभ अभेद्य, अग्निमंदक अथवा अग्निरोधक, सिकुड़न मुक्त है (सैनफोराइज़ेशन)।

(क) **रंगों से परिष्करण –** कपड़े के चयन में, चाहे उसे परिधान के लिए उपयोग किया जाना हो अथवा घर के अन्य कामों में, रंग एक महत्वपूर्ण घटक होता है। जो पदार्थ कपड़े को इस तरह रंगते हैं कि आसानी से रंग नहीं निकलता, उन्हें डाई कहते हैं। डाई करने का तरीका रेशे और डाई की रासायनिक प्रकृति, और वांछित प्रभाव पर निर्भर करता है। रंग चढ़ाने का काम निम्नलिखित स्तरों पर हो सकता है –

- रेशे के स्तर पर – विभिन्न रंगों के सूत अथवा डिज़ाइन वाले नमदा (फेल्ट) के लिए।
- सूत स्तर पर – बुने हुए चेक, धारीदार अथवा अन्य बुने हुए पैटर्नों के लिए।

- कपड़े के स्तर पर – पक्की रंग डाई के लिए सर्वाधिक सामान्य विधि (जैसे – डिज़ाइन रंजन के बाटिक तथा टाइ एंड डाई, और पिंटिंग)।

(ख) **छपाई (प्रिंटिंग) –** यह डाई (रंग) करने की सबसे उन्नत अथवा विशिष्ट विधि है। इसमें रंगों का स्थानीकृत अनुप्रयोग होता है, जो डिज़ाइन तक ही सीमित होता है। पिंटिंग में विशेष उपकरणों का उपयोग होता है, जिससे रंग केवल विशिष्ट क्षेत्रों तक ही पहुँचता है। इसलिए इससे कपड़े पर कई रंगों का उपयोग किया जा सकता है। ब्लॉक, स्टेंसिल अथवा स्क्रीन जैसे हाथ के उपकरणों द्वारा पिंटिंग की जा सकती है और औद्योगिक स्तर पर रोलर पिंटिंग अथवा ऑटोमैटिक स्क्रीन पिंटिंग की जाती है।

5.7 कुछ महत्वपूर्ण रेशे

कपास

परिधान और घरेलू वस्त्रों में कपास के रेशे का सर्वाधिक उपयोग किया जाता है। भारत पहला देश है जहाँ कपास उगाई और उपयोग की जाती थी। अभी भी यह सर्वाधिक कपास उगाने वाले क्षेत्रों में से एक है। कपास के रेशे कपास के पौधों के बीजफल से प्राप्त होते हैं। प्रत्येक बीज में काफी मात्रा में रुएँ होते हैं। जब बीज पक जाते हैं तो फली फूट जाती है। ओटाई प्रक्रिया द्वारा रेशों से बीज अलग किया जाता है और इन्हें बड़े-बड़े बंडलों (गट्ठरों) में कताई के लिए भेजा जाता है।

गुणधर्म

- कपास एक प्राकृतिक सेलुलोसिक, स्टेपल रेशा है। यह सबसे छोटा रेशा है जिसकी लंबाई 1 सेमी. से 5 सेमी. तक होती है, इसलिए सूत अथवा बनाया गया कपड़ा देखने में चमकहीन होता है और छूने में थोड़ा खुरदरा। यह वज़न में अन्य अधिकांश रेशों की तुलना में भारी होता है।
- कपास में नमी सोखने की अच्छी क्षमता होती है और यह सरलता से सूख भी जाता है इसलिए गर्मियों में उसका उपयोग आरामदायक होता है।
- भिन्न-भिन्न भार, सूक्ष्मता, बनावट तथा परिष्करण वाले सभी वस्त्र कपास के सूत से बनते हैं जैसे मसलिन, कैम्ब्रिक, पापलीन, लंबे कपड़े (लठ्ठा), केसमेंट, डेनिम, चादर बनाने का वस्त्र और परिष्करण और फर्नीशिंग सामग्री इत्यादि कुछ सूती कपड़े जो बाज़ार में उपलब्ध हैं।

लिनेन

लिनेन एक बास्ट रेशा है जो लैक्स के पौधे के तने से प्राप्त होता है। छाल के भीतर का गूदेदार भाग बास्ट कहलाता है। रेशे प्राप्त करने के लिए तनों को लंबे समय तक पानी में भिगोया जाता है, ताकि इसका नरम भाग गल जाए इस प्रक्रिया को **अपगलन (रैटिंग)** कहा जाता है। अपगलन के पश्चात् लकड़ी वाले आग को अलग किया जाता है और लिनेन के रेशों को एकत्र किया जाता है, फिर उन्हें कताई हेतु भेजा जाता है।

गुणधर्म

- लिनेन एक सेलुलोसिक रेशा भी है, इसलिए उसके कई गुणधर्म कपास जैसे होते हैं।
- रेशा कपास से लंबा और सूक्ष्म होता है, इसलिए इससे बना सूत मजबूत और अधिक चमकीला होता है।
- कपास की तरह लिनेन भी नमी को तत्काल सोख लेता है, इसलिए आरामदायक होता है। लेकिन यह रंगों को बहुत जल्दी अवशोषित नहीं करता, इसलिए उत्पन्न रंग अधिक चमकदार नहीं होता।

लैक्स पौधा विश्व में बहुत कम क्षेत्रों में उगाया जाता है। साथ ही इसे संसाधित करने के लिए लंबे समय की आवश्यकता होती है, इसलिए लिनेन का उपयोग कपास से कम होता है।

जूट और सन भी लिनेन की तरह बास्ट रेशे हैं। इसके रेशे मोटे होते हैं, और उनकी सुनम्यता अच्छी नहीं होती, इसलिए इनका उपयोग केवल रस्सियाँ और बोरे तथा इसी प्रकार के अन्य उत्पाद बनाने के लिए किया जाता है।

ऊन

ऊन भेड़ के बालों से प्राप्त होती है। इसे बकरी, खरगोश, ऊँट जैसे अन्य पशुओं से भी प्राप्त किया जा सकता है। इन रेशों को विशिष्ट बाल के रेशे कहा जाता है। विभिन्न प्रजाति की भेड़ों के बाल भिन्न-भिन्न प्रकार के होते हैं, कुछ भेड़ों को केवल इसलिए पाला जाता है कि वे अच्छी गुणवत्ता के रेशे प्रदान करती हैं। पशु से बाल उतारने की प्रक्रिया को कतरना (शीयरिंग) कहते हैं। यह जलवायु दशाओं के अनुसार वर्ष में एक या दो बार उतारी जा सकती है। कतरने के दौरान बाल को एक पीस में ही रखने का प्रयास किया जाता है जिसे **कर्तित ऊन** (फ़्लीस) कहते हैं। इससे रेशे अलग करना आसान हो जाता है, क्योंकि शरीर के विभिन्न अंगों के बालों की लंबाई और सूक्ष्मता अलग-अलग होती है। छंटाई के पश्चात् उनसे धूल, ग्रीस, शुष्क स्वेदन हटाने के लिए उन्हें अभिमाजित किया जाता है। फिर कार्बनीकरण किया जाता है जिससे इसमें फंसी हुई पत्तियाँ, और डंठल हटाए जाते हैं। फिर रेशों को कताई के लिए भेज दिया जाता है।

गुणधर्म

- ऊन एक प्राकृतिक प्रोटीन रेशा है। इसके रेशों की लंबाई 4 सेमी. से 40 सेमी. तक होती है और वह भेड़ की प्रजाति और पशु के शरीर के अंग के अनुसार खुरदरा या नरम होता है। इसमें प्राकृतिक सिकुड़न होती है अथवा यह पहले ही मुड़ा हुआ होता है, जिस कारण इसमें लोच और लंबाई जैसे गुणधर्म होते हैं।
- अन्य रेशों की तुलना में ऊन में कम मजबूती होती है, लेकिन इसमें लचीलापन और सुनम्यता होती है।
- ऊन में सतही-शल्क होते हैं जो जल विकर्षक होते हैं। फिर भी यह काफी पानी सोख सकता है, लेकिन सतह गीली महसूस नहीं होती। इस क्षमता के कारण यह आर्द्र और ठंडे पर्यावरण में आरामदायक होती है।

सूती, रेयान और पोलीएस्टर के साथ ऊन का मिश्रण किया जाता है, जो इसकी देखभाल और अनुरक्षण गुणधर्मों में सुधार लाती है।

रेशम

रेशम एक प्राकृतिक तंतु रेशा है, जो रेशम के कीड़े के स्राव से निर्मित होता है। यदि रेशम नियंत्रित दशाओं में निर्मित किया जाए, (उगाया गया अथवा शहतूत रेशम) तो मुलायम होता है और लंबे रेशे प्राप्त होते हैं उसके परिणामस्वरूप प्राप्त होने वाला कपड़ा सूक्ष्म, बेहतरीन और चमकीला होता है। यदि रेशम वन्य अथवा प्राकृतिक दशाओं में निर्मित हो तो रेशम खुरदरा, मजबूत और कम लंबाई का होता है। परिणामत: कपड़ा मोटा, खुरदरा लेकिन मजबूत होता है (जैसे टसर रेशम)। अच्छी गुणवत्ता वाले रेशम के उत्पादन के लिए रेशम के कीड़े की खेती सावधानीपूर्वक नियंत्रित की जाती है। इसे **रेशम कीट पालन** कहा जाता है। तंतु रेशा होने के कारण रेशम की कताई प्रक्रिया की आवश्यकता नहीं होती। लेकिन इसे कोकून से रील में सावधानीपूर्वक लपेटा जाना चाहिए। कई तंतुओं को एक साथ मोड़कर सूत बनाया जाता है। यदि तंतु टूट जाता है या कीड़ा कोकून तोड़ देता है, तो टूटे हुए फिलामेंट को कपास की तरह कताई द्वारा संसाधित किया जाता है, इसे कताई की गई रेशम या स्पन सिल्क कहा जाता है।

यह माना जाता है कि रेशम की खोज अचानक उस समय हुई जब एक कीड़े का कोकून चीन की राजकुमारी के चाय के कप में गिर गया। उसने इसे निकाला और पाया कि वह कोकून से एक लंबा तंतु निकाल सकती है। चीनियों ने रेशम उत्पादन की कला को लगभग 500 ई. तक अर्थात् 2000 वर्षों से भी अधिक समय तक गोपनीय बनाए रखा।

गुणधर्म

- रेशम एक प्राकृतिक प्रोटीन रेशा है। रेशम का स्वाभाविक रंग श्वेताभ से लेकर क्रीम तक होता है। जंगली रेशम भूरे रंग का होता है। रेशम के तंतु बहुत लंबे, सूक्ष्म और चिकने होते हैं। इनकी द्युति अथवा चमक अपेक्षाकृत अधिक होती है। इनमें प्राकृतिक गोंद होता है, जो रेशम को विशद बनावट प्रदान करता है।
- जिन मजबूत रेशों से कपड़ा बनाया जाता है, रेशम उनमें से एक है। इसकी सुनम्यता अच्छी और सामान्य दीर्घता होती है।

रेयान

यह विनिर्मित सेलुलोसिक रेशा है। सेलुलोसिक इसलिए कि यह लकड़ी की लुगदी से बनता है और विनिर्मित इसलिए कि यह लुगदी रसायनों से संसाधित की जाती है और इसको रेशों के रूप में पुन: निर्मित किया जाता है।

गुणधर्म

- चूँकि रेयान एक विनिर्मित रेशा है, इसलिए इसके आकार एवं आकृति को नियंत्रित किया जा सकता है। इसका व्यास समान होता है और यह स्वच्छ तथा चमकीला होता है।
- सेलुलोसिक रेशा होने के कारण इसके अधिकांश गुणधर्म कपास जैसे होते हैं। लेकिन यह कम मजबूत और कम टिकाऊ होता है।

रेयान और विनिर्मित सेलुलोसिक रेशों का मुख्य लाभ यह है कि उसे अपशिष्ट सामग्री से फिर पुन: संसाधित किया जा सकता है। वे देखने में रेशम जैसे होते हैं।

नायलॉन

नायलॉन, पूर्णतः रसायनों से विनिर्मित पहला वास्तविक कृत्रिम रेशा है। सबसे पहले इनका उपयोग टूथब्रश के शूक के रूप में किया गया। सन् 1940 में नायलॉन से बनने वाले प्रारंभिक वस्त्र जुराबें और स्टॉकिंग्स थीं, जिन्हें बेहद सफलता मिली। बाद में इसका उपयोग सभी प्रकार के वस्त्रों के लिए किया जाने लगा। इससे बाद में आने वाले अन्य कृत्रिम रेशों के प्रेरणास्रोत बने।

गुणधर्म

- नायलॉन तंतु सामान्यतः नरम, चमकीले और समान व्यास के होते हैं।
- नायलॉन काफी मजबूत और अपघर्षण रोधी होता है। अपघर्षण रोधी होने के कारण इसका उपयोग ब्रश, कार्पेट इत्यादि में उपयुक्त रहता है।
- नायलॉन अत्यधिक लचीला रेशा है। स्टाकिंग्स जैसे 'एक आकार' के वस्त्र हेतु बहुत महीन और पारदर्शी रेशों का उपयोग किया जाता है।
- नायलॉन एक लोकप्रिय कपड़ा है जिसका उपयोग परिधान, जुराबों, भीतर पहनने के वस्त्रों, तैराकी सूटों, दस्तानों, जाल, साड़ियों आदि में किया जाता है। होज़री और लैंजरी विनिर्माण में मुख्य रूप से इस रेशे का उपयोग होता है। बाह्य परिधान के लिए इसे अन्य रेशों के साथ मिलाया जा सकता है।

पोलीएस्टर

पोलीएस्टर एक अलग किस्म का विनिर्मित कृत्रिम रेशा है। इसे टेरीलीन अथवा टेरीन भी कहा जाता है।

गुणधर्म

- पोलीएस्टर रेशे का व्यास एक समान होता है, इसकी सतह नरम होती है और यह देखने में सीधा होता है। अंतिम उपयोग की आवश्यकतानुसार इसे कितना भी मजबूत, लंबा और व्यास का बनाया जा सकता है। यह रेशा आंशिक रूप से पारदर्शी और चमकीला होता है।
- पुनः आर्द्रता ग्रहण करने की क्षमता पोलीएस्टर में कम होती है अर्थात् यह सरलता से पानी को नहीं सोख पाता। गर्म शुष्क-ग्रीष्म काल के महीनों में इसे पहनना आरामदेह नहीं होता।
- पोलीएस्टर का सर्वाधिक लाभदायक गुणधर्म यह है कि इसमें सलवटें नहीं पड़ती। सामान्य रूप से रेयान, कपास, ऊन और कुछ हद तक बुने हुए रेशम के साथ मिलाकर इस रेशे का अधिक प्रयोग किया जाता है।

एक्रीलिक

यह एक दूसरा कृत्रिम रेशा है। यह ऊन से इतना अधिक मिलता है कि कोई विशेषज्ञ भी दोनों में अंतर नहीं बता सकता। इसे सामान्यतया कैशमिलॉन कहा जाता है। यह ऊन से सस्ता होता है।

गुणधर्म

सभी विनिर्मित रेशों की तरह इस रेशे की लंबाई, व्यास और महीनता निर्माता द्वारा नियंत्रित की जाती है। इसका रेशा अलग-अलग प्रकार से लहरदार और चमकीला बनाया जा सकता है।

- एक्रीलिक बहुत अधिक मजबूत नहीं होता। मजबूती में यह कपास के रेशे के समान होता है। इसके रेशों में उच्च दीर्घरूपता और बेहतर सुनम्यता होती है।

एक्रीलिक को ऊन के स्थान पर प्रयोग में लाया जाता है और इसका बच्चों के कपड़ों, वस्त्रों, कंबलों और बुने हुए उत्पादों में उपयोग किया जाता है।

इलैस्टोमरी रेशे

अभी तक जिन रेशों का उल्लेख किया गया है, उनके अतिरिक्त कुछ कम प्रचलित रेशे भी हैं। ये हैं इलास्टिक, रबड़ आदि, जिनका विभिन्न रूपों में उत्पादन किया जा सकता है। प्राकृतिक रूप में इसमें रबड़ आता है और इसका कृत्रिम समरूप स्पैंडेक्स अथवा लाइक्रा है। सामान्यतया इनका उपयोग कम सुनम्यता वाले उक्त किसी भी रेशे के साथ मिलाकर किया जा सकता है।

इस अध्याय में कपड़ों के बारे में जानकारी देने के पश्चात् आपको 'बाल्यावस्था' खंड के अंतर्गत रेशे से बने परिधानों की दुनिया, जैसे कि वस्त्र के बारे में अवगत कराया जाएगा।

किशोरों को कपड़ों के बारे में जानना आवश्यक है, क्योंकि इससे वे बुद्धिमत्तापूर्वक वस्त्रों का चयन कर सकेंगे। यह एक ऐसी रुचि है जो सभी किशोरों में समान रूप से पाई जाती है। वस्त्रों के अतिरिक्त जो अन्य रुचि किशोरों को आपस में जोड़ती है, वह मीडिया और संचार है। आइए! मीडिया और संचार प्रौद्योगिकी के अगले अध्याय में आपस में जुड़े इन दोनों पहलुओं के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करें।

प्रमुख शब्द

कपड़े, सूत, रेशे, वस्त्र, वस्त्र परिष्करण, बुनाई, निटिंग, कपास, लिनेन, ऊन, रेशम, रेयान, नायलॉन, पोलीएस्टर, एक्रीलिक।

■ समीक्षात्मक प्रश्न

1. विभिन्न प्रकार के कपड़ों से बनी दैनिक उपयोग की पाँच वस्तुओं के नाम बताएँ।
2. वस्त्र रेशों को कैसे वर्गीकृत किया जाता है? संक्षेप में उनकी विशेषताएँ बताएँ।
3. सूत क्या होता है? सूत संसाधित करने की विभिन्न विधियाँ बताएँ?
4. कपड़ा उत्पादन की प्रक्रियाएँ बताएँ?
5. निम्नलिखित रेशों में से प्रत्येक के कोई तीन गुणधर्म बताएँ?
    - कपास
    - लिनेन
    - ऊन
    - रेशम
    - रेयान
    - नायलॉन
    - एक्रीलिक

■ प्रायोगिक कार्य 5

हमारे आस-पास पाए जाने वाले कपड़े

थीम हमारे आस-पास पाए जाने वाले कपड़े
कार्य 1. एक दिन में प्रयुक्त होने वाले कपड़ों और परिधानों को रिकॉर्ड करें।
2. उत्पाद के प्रति कपड़े की उपयुक्तता का विश्लेषण करें।

प्रयोग की विधि – कोई एक दिन चुनें और उन कपड़ों और परिधानों को नोट करें, जिनका आप दिन भर में उपयोग और अनुभव करते हैं। आप विभिन्न संवर्गों में रिकॉर्ड करने के लिए निम्नलिखित तालिका का उपयोग कर सकते हैं – (स्वयं तथा आस-पास के लिए, तालिका में दिए गए उदाहरण की भाँति)

दिन का समय	*उपयोग*	*उत्पाद*	*कपड़ा*
प्रातः 6.00 बजे	स्वयं	तौलिया	कपास
प्रातः 6.00 बजे	आस-पास	तकिए का लिहाफ़	कपास

4-5 विद्यार्थियों का समूह बनाएँ और अपने प्रेक्षण एकत्र करें; तथा उनके द्वारा स्कूल और घर पर पहने जाने वाले परिधानों में प्रयुक्त कपड़े पर चर्चा करें।

■ प्रायोगिक कार्य 6

हमारे आस-पास पाए जाने वाले कपड़े

थीम कपड़ों की तापीय गुणधर्म और ज्वलनशीलता
अभ्यास विभिन्न कपड़ों की दहन जाँच और उसका कोटि विश्लेषण

कार्य का उद्देश्य – कपड़ों की ज्वलनशीलता से कपड़ों को आग में या इसके निकट ले जाने पर होने वाली प्रतिक्रिया की जाँच करने में सहायता मिलेगी। यह उपभोक्ता द्वारा उपयोग के समय कपड़ों के रख-रखाव में मददगार सिद्ध होगा। यह ऐसे कपड़ों जिनमें पाँच तरह के संयोजन होते हैं, ऐसे कपड़ों में रेशे के अंश की पहचान करने की एक विधि भी है।

ताप विभिन्न रेशों को विभिन्न प्रकार से प्रभावित करता है। कुछ रेशे झुलस जाते हैं, कुछ आग पकड़ लेते हैं, कुछ पिघल जाते हैं, या कुछ आग पकड़ते अथवा कुछ सिकुड़ जाते हैं। कुछ रेशों में आग स्वयं बुझ जाती है और अन्य पूर्णतः अदहनीय होते हैं।

रेशों की दहन संबंधी विशेषताएँ					
रेशा	**आग के समीप आने पर**	**आग में**	**आग से हटाए जाने पर**	**गंध**	**राख अथवा अवशेष**
कपास और लिनेन	सिकुड़ता नहीं, आग पकड़ लेता है।	शीघ्र जल जाता है।	जलता रहता है पश्चदीप्ति रहती है।	जलते हुए कागज जैसी	हल्की, मृदु राख, आकृति बनी रहती है।
ऊन और रेशम	आग से कुंचित हो जाता है।	धीरे-धीरे जलता है।	स्वयं बुझ जाती है।	जलते बाल जैसी	भंगुर होना, कम मात्रा में, संदलन योग्य राख
रेयान	सिकुड़ता नहीं है, आग पकड़ लेता है।	तेजी से जलता है।	तेजी से जलता रहता है।	जलते कागज जैसी	अत्यधिक कम मात्रा में हल्का, रोएँदार अवशेष
नायलॉन	सिकुड़ जाता है।	पिघलता है, आग पकड़ लेता है।	पिघलता रहता है।	तीक्ष्ण	कठोर, कत्थई रंग का दाना
पोलीएस्टर	सिकुड़ जाता है।	पिघलता है, आग पकड़ लेता है।	पिघलता रहता है।	प्लास्टिक के जलने जैसी	कठोर, काले रंग का दाना
एक्रीलिक	सिकुड़ता नहीं है आग पकड़ लेता है।	तेजी से पिघलने के साथ जलता भी है।	जलता रहता है।	तीक्ष्ण	कठोर, काले रंग के सिलवटदार दानें

प्रयोग विधि

1. कपड़े की एक पतली पट्टी लें (आधा सेमी. से 5 सेमी.)
2. पट्टी को चिमटी अथवा सँडासी से पकड़ें और इसे जलती हुई मोमबत्ती अथवा स्प्रिट लैंप की जलती हुई लौ के पास लाकर दहन की जाँच करें।

सावधानी

इस प्रयोग को अध्यापक के पर्यवेक्षण में मोमबत्ती अथवा स्प्रिट लैंप की बहुत धीमी लौ पर करें।

3. विभिन्न कपड़ों के 4–5 सैंपल लेकर प्रक्रिया को दोहराएँ और प्रेक्षणों को लिखें।

	आग के समीप आने पर	**आग में**	**आग से हटाए जाने पर**	**गंध**	**अवशेष के बनावट और रंग**	**निष्कर्ष**

अध्याय
6

संचार माध्यम और संचार प्रौद्योगिकी

उद्देश्य

इस अध्याय को पूरा करने के बाद शिक्षार्थी सक्षम होंगे –

- संचार की संकल्पना को परिभाषित करने में,
- रोजमर्रा के जीवन में संचार के महत्त्व पर विचार-विमर्श करने में,
- संचार के विभिन्न रूपों की सूची बनाने में,
- संचार-प्रक्रिया का वर्णन करने में,
- संचार माध्यमों के वर्गीकरण और कार्यकलापों की व्याख्या करने में, और
- विभिन्न संचार प्रौद्योगिकियों का विश्लेषण करने में।

संचार माध्यम और संचार अध्ययन का एक ऐसा महत्वपूर्ण क्षेत्र है, जिसका किशोरों पर प्रभाव पड़ता है। इस अध्याय में हम यह चर्चा करेंगे कि हमारी प्रतिदिन की पारिस्थितिकी के ये दो पहलू कैसे हमारे जीवन का अभिन्न अंग बन गए हैं, जो सामान्यतया हमारे जीवन की गुणवत्ता को बढ़ाते हैं। हम पहले संचार की संकल्पना से शुरू करेंगे।

6.1 संचार और संचार प्रौद्योगिकी

मानव जीवन के लिए संचार आधारभूत और अति आवश्यक है। यह धरती पर जीवन आरंभ होने के समय से ही विद्यमान रहा है। आधुनिक समय में, तेजी से विकसित होती प्रौद्योगिकियों के साथ, लगभग हर सप्ताह बाजार में नयी संचार विधियाँ और उपकरण आ रहे हैं। इनमें से कुछ अपनी गुणवत्ता और उपयोग के कारण लोकप्रिय हो गए हैं और काफी समय से कायम हैं।

आगे दिए गए चित्रों को ध्यान से देखिए और इनमें चित्रित विभिन्न व्यक्तियों की स्थितियों, भावनाओं और उनके विचारों को समझने का प्रयास करिए–

संचार क्या है?

संचार विविध परिस्थितियों पर विचार-चिंतन करने, उनका अवलोकन करने, उन्हें समझने, उनका विश्लेषण करने तथा इन सबको विभिन्न संचार माध्यमों द्वारा दूसरों तक संप्रेषित करने की प्रक्रिया है। यह स्वयं देखने या अवलोकन करने, सुनने या ध्यान देने या फिर औरों के साथ विचारों, मतों, अनुभवों, तथ्यों, जानकारी, प्रभावों, अवसरों और संवेगों के आदान-प्रदान से भी संबंधित है।

संचार शब्द अँग्रेज़ी के कम्युनिकेशन का पर्याय है जो लैटिन **कॉम्यूनिस** से निकला है, जिसका अर्थ है **सर्वसामान्य**। इसलिए, यह न केवल विचारों, मतों को व्यक्त करने या ज्ञान और सूचना प्रदान करने से संबंधित है, बल्कि इसमें विषय को बिलकुल उसी अर्थ में समझना भी शामिल है, जो संप्रेषक और ग्राही के लिए समान हो। व्यक्तियों के बीच संदेश द्वारा संपूर्ण आशय पहुँचाने का चैतन्य प्रयास ही प्रभावी संचार कहलाता है। संचार की प्रक्रिया एक सतत् प्रक्रिया है। यह घर, स्कूल, समुदाय और उससे भी आगे सामुदायिक जीवन के सभी क्षेत्रों में व्याप्त है।

संचार का वर्गीकरण

संचार को स्तरों, प्रकारों, रूपों और माध्यमों के आधार पर निम्नलिखित रूपों में वर्गीकृत किया जा सकता है –

क. पारस्परिक क्रिया के आधार पर वर्गीकरण

(i) *एकतरफ़ा संचार* – ऐसी परिस्थितियों में ग्राही सूचना प्राप्त तो करता है, पर वह प्रेषक को बदले में कुछ लौटा नहीं पाता, या तत्काल कोई प्रतिक्रिया नहीं दे पाता। इसलिए संचार एकतरफा रहता है। भाषण, व्याख्यान, प्रवचन, रेडियो या म्यूज़िक सिस्टम पर संगीत सुनना, टेलीविज़न पर कोई भी मनोरंजक कार्यक्रम देखना, वेबसाइट पर सूचना ढूँढ़ने के लिए इंटरनेट का उपयोग करना आदि, एकतरफा संचार के उदाहरण हैं।
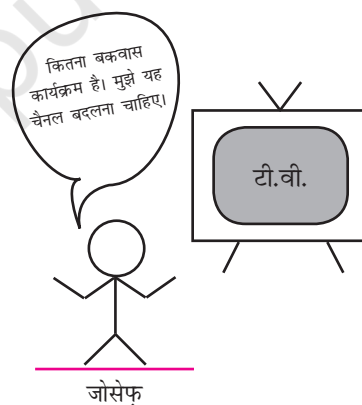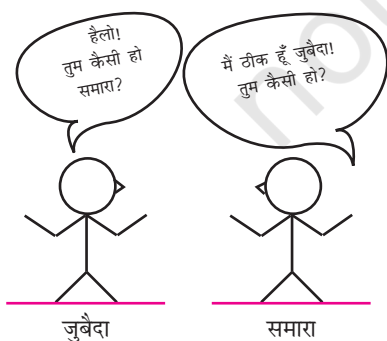
(ii) *दुतरफ़ा संचार* – यह ऐसा संचार है जो दो या अधिक व्यक्तियों के बीच होता है, जहाँ एक-दूसरे से संप्रेषण करने वाले सभी पक्ष, मतों, विचारों, सूचना आदि का आदान-प्रदान शाब्दिक या अशाब्दिक रूप में करते हैं। मोबाइल फोन पर बात करना, माँ के साथ भविष्य की योजनाओं पर विचार-विमर्श करना, चैटिंग के लिए इंटरनेट का प्रयोग करना आदि इसके कुछ उदाहरण हो सकते हैं।

जब अपनी भूख जताने के लिए कोई शिशु रोता है तो उसकी अनुक्रिया में उसकी माँ उसका पेट भरती है। शिशु का रोना वह संदेश है जो बच्चे की भूख को संप्रेषित करता है और शिशु के जीवन के लिए अत्यावश्यक है। इस प्रकार यह संचार दुतरफा है।

ख. संचार के स्तरों पर आधारित वर्गीकरण

(i) *अंतरा–वैयक्तिक संचार* – यह स्वयं से संवाद करने से संबंधित है। यह अवलोकन करने, विश्लेषण करने और ऐसे निष्कर्षों पर पहुँचने की एक प्रकार की मानसिक प्रक्रिया है जो किसी व्यक्ति के वर्तमान, भूत और भविष्य के व्यवहार और जीवन के लिए अर्थपूर्ण हो। यह एक सतत् प्रक्रिया है जो किसी व्यक्ति के भीतर चलती रहती है, उदाहरण के लिए किसी साक्षात्कार अथवा मौखिक परीक्षा में उपस्थित होने से पूर्व उसका मानसिक पूर्वाभ्यास।

(ii) *अंतर्वैयक्तिक संचार* – इसका संबंध दो या उनसे अधिक लोगों के बीच आमने-सामने होने की स्थिति में विचारों और मतों की साझेदारी से है। यह औपचारिक अथवा अनौपचारिक स्थिति में संपन्न हो सकता है। इस प्रकार के संचार के लिए संचार के विविध साधनों का, जैसे शारीरिक संचालन, मुखमुद्राएँ, हाव-भाव, भंगिमाएँ, लिखित पाठ एवं शब्द और ध्वनि जैसे मौखिक तरीकों का प्रयोग किया जा सकता है। इसके उदाहरण हैं– पढ़ाई के दौरान या कोई प्रयोग करने के दौरान आने वाली समस्याओं के बारे में अपने मित्र से बातचीत करना या फिर किसी परिसंवाद में भाग लेना, जिसके बाद प्रश्न-उत्तर सत्र हो।

चिकित्सक और रोगी की बातचीत

अंतर्वैयक्तिक संचार सर्वाधिक प्रभावी और आदर्श होता है। इसके दो कारण हैं, पहला यह कि इसमें ग्राही और संचारक के बीच सदैव निकटता और प्रत्यक्ष संपर्क रहता है और इसलिए ग्राही को किसी प्रस्तावित विचार या अभिमत को स्वीकार करने के लिए मनाना, प्रेरित करना और राजी करना आसान होता है। दूसरे, प्रस्तावित अभिमत के विषय में ग्राही की प्रत्यक्ष अनुक्रिया के रूप में त्वरित और दृढ़ प्रतिपुष्टि संभव है।

(iii) *समूह संचार* – यह अंतर्वैयक्तिक संचार की ही तरह प्रत्यक्ष और वैयक्तिक ढंग का संचार है, किंतु इस संचार प्रक्रिया में दो से अधिक व्यक्ति शामिल होते हैं। समूह संचार, परस्पर-स्वीकृत दृष्टिकोण और सामूहिक निर्णय को सुनकर बनाने में सहायता करता है और आत्म-अभिव्यक्ति का अवसर देता है और किसी सभा में व्यक्ति के प्रभाव को बढ़ाता है, जिससे समूह में उसका स्थान सुदृढ़ होता है। यह मनोविनोद और तनावमुक्त होने में, समाजीकरण में और प्रेरित करने में सहायक होता है। समूह संचार को बढ़ाने के लिए कई प्रकार के दृश्य-श्रव्य साधनों का प्रयोग किया जा सकता है।

(iv) *जनसंचार* – प्रौद्योगिकी में महत्वपूर्ण विकास होने के परिणामस्वरूप मतों, विचारों और नव-प्रवर्तनों या नए विचारों को समाज के विशाल हिस्से तक पहुँचाना संभव हो गया है। जनसंचार को किसी यांत्रिक युक्ति की सहायता से संदेशों को बहुगुणित करते जाने की प्रक्रिया तथा उन्हें जनता तक पहुँचाने की प्रक्रिया के रूप में भी परिभाषित किया जा सकता है। जनसंचार के साधन और माध्यम हैं– रेडियो, टी.वी., उपग्रह संचार, अखबार और पत्रिकाएँ। जन संचार के दर्शकों/श्रोताओं की संख्या बहुत विशाल और विविधतापूर्ण है। ये परस्पर भिन्न प्रकार के तथा नामरहित होते हैं, ये काफी बड़े क्षेत्र में फैले हुए हैं तथा देश और काल की दृष्टि से संप्रेषक से दूर स्थित होते हैं। इन्हीं कारणों से उनसे कोई सही, पूर्ण, प्रत्यक्ष और तत्काल प्रतिपुष्टि पाना संभव नहीं है; बल्कि यह प्रतिपुष्टि काफी समय के बाद प्राप्त होती है और संचित रूप से प्राप्त होती है।

(v) *अंतरा-संस्था संचार* – संस्थागत संचार सुव्यवस्थित संगठनों में होता है। मानवों की ही तरह, जब लोग एक साथ किसी संस्था या संगठन में कार्य करते हैं, तो संस्था भी संबंध स्थापित करती है और उन संबंधों का निर्वाह करती है। ये अपने माहौल में और अपने विभागों या अनुभागों के बीच संचार के विभिन्न स्तरों का प्रयोग करते हैं। प्रत्येक संस्था में पदों के अलग-अलग स्तर अथवा पदानुक्रम होते हैं, जो सामान्य उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए मिलकर कार्य करते हैं। ऐसी संस्थाओं में सूचना का प्रवाह समान स्तर पर दुतरफा होता है और विभिन्न स्तरों के बीच एकतरफा।

(vi) *अंत:संस्था संचार* – इसका संबंध किसी संस्था द्वारा अन्य संस्थाओं के साथ आपसी सहयोग और समन्वय से काम करने के लक्ष्य की दृष्टि से विकसित संचार प्रणाली से है। उदाहरणार्थ, देश के विकासात्मक कार्यकलापों में तकनीकी और वित्तीय सहायता (दोनों ही) अंतर्राष्ट्रीय अभिकरणों द्वारा दी जाती है, जबकि प्रशासनिक सहायता केंद्र सरकार और राज्य सरकार द्वारा दी जाती है।

उल्लेखनीय है कि अंतरा-संस्थागत और अंत:संस्थागत संगठनों में, विभागों अथवा संस्थाओं के बीच संचार नहीं होता; बल्कि इन संस्थाओं में कार्य करने वाले व्यक्ति ही एक-दूसरे से संचार करते हैं। अत:, व्यक्ति का विवेक अति महत्वपूर्ण है।

भारत सरकार

भारत सरकार के विभिन्न मंत्रालय

विभिन्न अंर्तराष्ट्रीय एजेंसियाँ

उदाहरणार्थ, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, कृषि मंत्रालय, महिला और बाल विकास मंत्रालय, इनमें राज्य सरकारें, उनके संबद्ध विभाग और अभिकरण शामिल हैं।

उदाहरणार्थ – विश्व बैंक, यूनिसेफ, यू.एस.ए.आई.डी., यू.एन.डी.पी., फोर्ड फाउंडेशन, ऑक्सफैम; इनमें विभिन्न अन्य भारतीय गैर-सरकारी संगठन शामिल हैं।
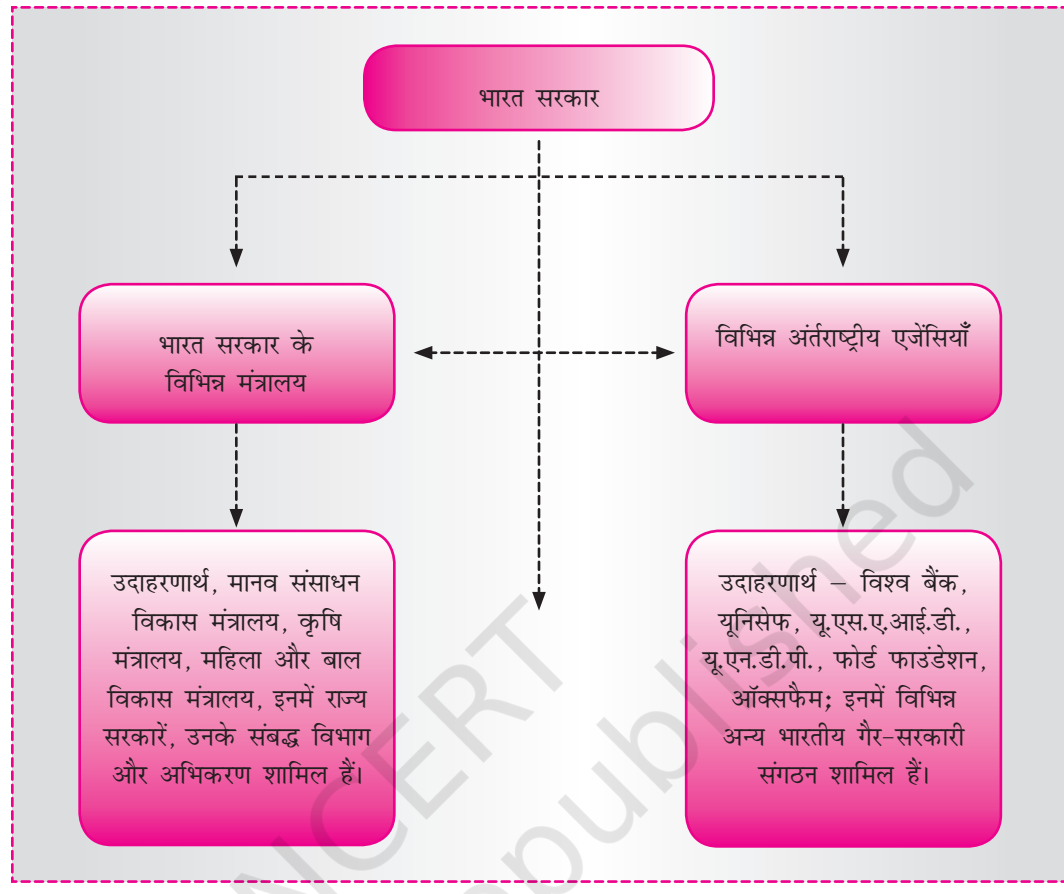
चित्र 1 – विभिन्न संस्थाओं के बीच संचार प्रणाली

ग. **संचार के साधन अथवा विधि पर आधारित वर्गीकरण**

(i) *शाब्दिक या मौखिक संचार* – श्रवण साधन अथवा मौखिक माध्यम, जैसे – बोलना, गाना और कभी-कभी स्वर का लहज़ा इत्यादि भी मौखिक संचार के लिए महत्वपूर्ण हैं।

अनुसंधान से स्पष्ट है कि सभी व्यक्ति अपने सक्रिय समय का लगभग 70 प्रतिशत समय मौखिक रूप से संचार करने, अर्थात् सुनने, बोलने और जोर से पढ़ने में बिताते हैं।

(ii) *गैर-शाब्दिक संचार* – संचार के गैर-शाब्दिक साधन हैं – हाव-भाव, मुखमुद्राएँ, मिज़ाज, भंगिमाएँ, नेत्र संपर्क, स्पर्श, परा-भाषा, लिखाई, पहनावा, केश-सज्जा आदि साथ ही वास्तुकला, प्रतीकों और संकेतों की भाषा, जैसे – कुछ जनजातीय लोगों द्वारा प्रयोग किए जाने वाले धूम्र संकेत।

पिछले अध्याय 'हमारे आस-पास के परिधान' में आपने पढ़ा कि हम अलग-अलग अवसरों के लिए अलग-अलग पोशाक पहनते हैं। वास्तव में हमारी पोशाक पहनने की शैली हमारे कुछ कहे बिना भी हमारे व्यक्तित्व और हमारी मनोदशा को ज़ाहिर करती है।

घ. **एक से अधिक इंद्रियों से काम लेने के आधार पर वर्गीकरण**

आपने कभी यह जानने की कोशिश की है कि किताब में पढ़ने की तुलना में केवल टीवी पर अथवा जीवंत लोकनृत्य या शास्त्रीय नृत्य प्रस्तुति देखने से अपनी समृद्ध

परंपरा के बारे में जानने-समझने में अधिक आसानी होती है और यह अधिक रुचिकर होता है?

हमारी इंद्रियाँ और संचार		
• लोग जो पढ़ते हैं, उसका 10 प्रतिशत याद रखते हैं	पढ़ना	दृश्य
• लोग जो सुनते हैं, उसका लगभग 20-25 प्रतिशत याद रखते हैं	सुनना	श्रव्य
• लोग जो देखते हैं, उसका लगभग 30-35 प्रतिशत उनके दिमाग में रहता है	देखना	दृश्य
• लोग जो देखते और सुनते हैं, उसका 50 प्रतिशत या उससे अधिक वे याद रखते हैं, देखा और सुना	दृश्य	दृश्य-श्रव्य
• लोग जो देखते, सुनते और करते हैं, उसका 20-25 प्रतिशत या उससे अधिक याद रखते हैं देखा, सुना और किया	दृश्य	श्रव्य
अधिक इंद्रियों से काम लेने पर अध्ययन, अधिक स्पष्ट रूप से समझ में आता है और स्थायी रहता है।		

सारणी 1 – संबद्ध इंद्रियों की संख्या के आधार पर संचार का वर्गीकरण

संचार का प्रकार	उदाहरण
श्रव्य	रेडियो, श्रव्य रिकॉर्डिंग, सीडी प्लेयर, व्याख्यान, लैंड लाइन या मोबाइल फ़ोन
दृश्य	संकेत या प्रतीक, मुद्रित सामग्री, चार्ट, पोस्टर
श्रव्य-दृश्य	टेलीविज़न, वीडियो फ़िल्में, मल्टी-मीडिया, इंटरनेट

क्रियाकलाप 1

निम्नलिखित कार्य में शामिल किए गए संचार के विभिन्न साधनों अथवा माध्यमों, प्रकारों, और स्तरों की सूची बनाएँ। अपने पर्यवेक्षण दर्ज करें – क्या आपको देश के किसी ग्रामीण क्षेत्र, किसी गाँव अथवा किसी छोटे शहर में रहने, या वहाँ जाने का मौका मिला है? आपका क्या अनुभव रहा? क्या आपने वहाँ उन्नत प्रौद्योगिकी और संचार के चिह्न जैसे मोबाइल फ़ोन, फ़ैक्स मशीनें और अन्य उपस्कर, बिजली के खंभे और अन्य ऐसी ही वस्तुएँ देखीं? वहाँ के नौजवानों, महिलाओं और बूढ़े लोगों से मिलने और उनसे बातचीत करने का अनुभव कैसा रहा? इस पर अपनी कक्षा में चर्चा करें।

संचार कैसे होता है?

संचार की प्रक्रिया

किसी **माध्यम** के ज़रिए **प्रेषक** से **प्राप्तकर्त्ता** तक सूचना अथवा विषय के **संप्रेषण** की प्रक्रिया संचार कहलाती है। इस प्रक्रिया में विभिन्न तरीकों से सूचना के आदान-प्रदान में वह लचीलापन शामिल है, जिससे प्रेषक और प्राप्तकर्त्ता दोनों सूचना को ठीक-ठीक स्पष्टत: और पूर्ण रूप से

समझ लें। संदेश पर आगे की योजना बनाने के लिए श्रोताओं/दर्शकों की **प्रतिपुष्टि** भी यह ठीक उसी प्रकार प्राप्त करता है, जैसे बाजार में कोई उत्पाद भेजने से पहले बाज़ार सर्वेक्षण द्वारा किया जाता है।

चलिए देखते हैं कि संचार प्रक्रिया किस क्रम में चलती है। इसके वर्णन का एक तरीका इस प्रकार है – **किसने, क्या, किससे, कब, किस प्रकार, किन परिस्थितियों में कहा और उसका क्या प्रभाव रहा।** आमतौर पर, किसी भी संचार प्रक्रिया के आधारभूत घटकों का चक्र पूरा करने के लिए इसे एक निश्चित क्रम में व्यवस्थित किया जाता है। प्रभावी और सफल संचार के लिए नीचे दिए गए पाँच घटकों का कुशलता से नियंत्रण किया जाना चाहिए। इसे संचार के **'एस.एम. सी.आर.ई. मॉडल'**(SMCRE Model) के ज़रिए आसानी से समझा जा सकता है–
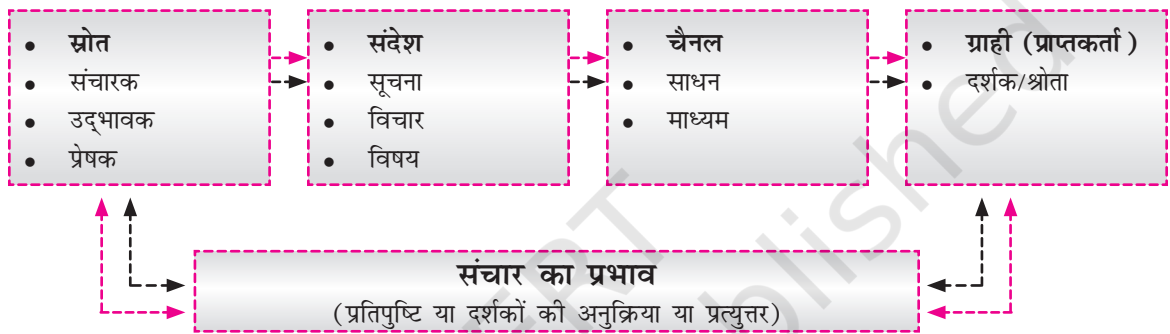
चित्र 2 – संचार का एस.एम.सी.आर.ई. मॉडल

एस.एम.सी.आर.ई. मॉडल (आकृति 2) संचार की संपूर्ण प्रक्रिया और उसमें शामिल घटकों को दर्शाता है।

1. **स्रोत** – स्रोत वह व्यक्ति है जो संचार की प्रक्रिया को शुरू करता है। वह पूरी संचार-प्रक्रिया को प्रभावी बनाने के लिए उत्तरदायी मुख्य घटक है। वह श्रोता/दर्शक के एक विशिष्ट समूह को इस प्रकार संदेश देता है/देती है कि यह न केवल संदेश के सही संप्रेषण में परिलक्षित होता है बल्कि इससे अपेक्षित अनुक्रिया भी प्राप्त होती है। वह आपके शिक्षक, माता-पिता, मित्र, सहपाठी, विस्तार कार्यकर्ता, नेता, प्रशासक, लेखक, किसान अथवा देश के दूरस्थ क्षेत्र से देशज जानकारी रखने वाला कोई जनजातीय व्यक्ति हो सकता/सकती है।

क्रियाकलाप 2

ग्रामों/ग्रामीण क्षेत्रों में सूचना के संभावित स्रोतों की पहचान कीजिए।

2. **संदेश** – यह वह विषय या सूचना है जिसे संचारक प्राप्त करने की इच्छा करता है, स्वीकार करता है या उस पर कार्रवाई करता है। यह कोई भी ऐसी तकनीकी, वैज्ञानिक, आम जानकारी हो सकती है या किसी व्यक्ति, समूह अथवा अधिक बड़े जनसमुदाय की रोज़मर्रा की जिंदगी या ज्ञान के किसी क्षेत्र से संबंधित सामान्य या विशिष्ट विचार हो सकता है। अच्छा संदेश सरल, आकर्षक और स्पष्ट होता है। इसे अपनाए गए चैनलों और ग्राही समूह

की प्रकृति और स्वरूप की दृष्टि से भी बहुत ही विशिष्ट, प्रामाणिक, समयोचित, उपयुक्त और प्रयोज्य होना चाहिए।

3. **चैनल** – संचार का वह माध्यम जिसके द्वारा कोई जानकारी प्रेषक से ग्राहियों तक पहुँचती है, चैनल कहलाता है। आमने-सामने बैठकर किया गया संचार एवं मौखिक संचार, संचार के सर्वाधिक सहज और प्रभावी साधनों में से एक है। यह विश्व के बहुसंख्य विकासशील और अल्प-विकसित देशों में सर्वाधिक प्रचलित संचार का माध्यम है। किंतु समय के बीतने के साथ-साथ और समाज में हुए सामाजिक परिवर्तन की दृष्टि से अब यह रुख उन्नत जन संचार माध्यमों और बहु माध्यम प्रौद्योगिकियों की ओर हो गया है।

चैनल दो प्रकार के हो सकते हैं –

(i) अंतर्वैयक्तिक संचार चैनल, जैसे – अलग-अलग व्यक्ति और समूह।

(ii) जनसंचार माध्यम द्वारा संचार के चैनल जैसे – उपग्रह, बेतार और ध्वनि तरंगें।

4. **ग्राही (प्राप्तकर्ता)** – संदेश या संचार कार्य के लक्ष्य के रूप में ग्राही या श्रोता या दर्शक। ग्राही कोई व्यक्ति या समूह, आदमी या औरत, ग्रामीण या शहरी, वृद्ध या जवान हो सकते हैं। ग्राही समूह जितना अधिक समरूप होगा, सफ़ल संचार के अवसर उतने ही अधिक होंगे।

क्रियाकलाप 3

किन्हीं दो संचार माध्यमों, जैसे – रेडियो, पत्र-पत्रिका या टीवी से एक समाचार कथा या अभियान या सामाजिक संदेश पर ध्यान दें।

क्रियाकलाप 4

किसी ऐसे पारंपरिक तरीके का पता लगाएँ जिसका उपयोग देश के जनजातीय और/या ग्रामीण लोग अपने क्षेत्रों में महत्वपूर्ण घोषणा करने के लिए करते हैं।

क्रियाकलाप 5

जानकारी के ग्राही के रूप में लिखिए कि आप अपने विद्यालय से किस प्रकार की और किस कोटि की जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं।

5. **सूचना का प्रभाव (प्रतिपुष्टि)** – संचार प्रक्रिया तब तक अधूरी रहती है जब तक प्रेषित संदेश के संबंध में अनुक्रिया प्राप्त नहीं हो जाती। यह किसी भी संचार प्रक्रिया का पहला कदम होने के साथ-साथ अंतिम घटक भी है। यदि संदेश की अनुक्रिया वही हो जिसकी संभावना थी तो यह चक्र पूरा हो जाता है। तथापि, यदि लक्षित दर्शकों/श्रोताओं की प्रतिक्रिया से अपेक्षित परिणाम प्राप्त नहीं होते, तो संदेश पर पुनर्विचार और संशोधन होता है और संपूर्ण संचार प्रक्रिया दोहराई जाती है। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं – (क) जब कोई शिक्षक पाठ पढ़ा देता है, तो वह विद्यार्थियों से यह जानने के लिए प्रश्न पूछता है कि उन्होंने पाठ समझ लिया या नहीं। प्रश्न पूछने और उत्तर जानने की यह क्रिया कि क्या विषय-वस्तु और पाठ समझे गए हैं, और फिर से किन विषयों को समझाने की आवश्यकता है, प्रतिपुष्टि कहलाती है। (ख) समाचार-पत्रों और पत्रिकाओं में छपे पाठकों के पत्र, संपादकों और लेखकों को दी गई प्रतिपुष्टि के ही एक रूप हैं। (ग) टेलीविज़न कार्यक्रमों की उत्तमता-निर्धारण बिंदु (रेटिंग या टी.आर.पी.), दर्शकों से प्राप्त प्रतिपुष्टि का एक अन्य रूप है।

6.2 संचार माध्यम (मीडिया) क्या है?

रेडियो सुनते समय या टेलीविज़न देखते समय आप जो सुनते या देखते हैं, वह आपको किसी-न-किसी रूप में प्रभावित करता है। यह संचार माध्यम का प्रभाव है। चलिए इसके बारे में और पढ़ते हैं।

निम्नलिखित में से सबसे अधिक विद्यमान घटक को पहचानिए – विज्ञापन और कार्यक्रम, जिन्हें हम टीवी पर देखते हैं, थिएटर या टीवी पर जो फ़िल्में देखते हैं, अखबार में जो समाचार पढ़ते हैं, राजनेता का भाषण, कक्षा में शिक्षक द्वारा दिए गए अनुदेश, अथवा किसी उपकरण के ठीक से काम न करने पर की गई शिकायत या घर बैठे इंटरनेट द्वारा की गई खरीदारी।

इन सभी में सामान्य बात यह है कि इन संदेशों को विविध क्षेत्रों में पहुँचाने के लिए किसी-न-किसी **माध्यम** का प्रयोग किया गया है। उदाहरणार्थ, जब हम किसी से बात करते हैं या किसी को बात करते हुए सुनते हैं, तो हवा उस माध्यम के रूप में काम करती है जिससे ध्वनि-तरंग संचरित होती है क्योंकि कोई भी ध्वनि शून्य में संचरित नहीं हो सकती।

अतः, संचार यदि एक प्रक्रिया है तो, **संचार-माध्यम (मीडिया) ही वह साधन है, जो धारणाओं, विचारों, भावनाओं, नए तथ्यों, अनुभवों आदि को प्रेषित और प्रसारित करने के लिए संचार के विभिन्न तरीकों का प्रयोग करता है।** जनसंचार माध्यमों में संचार के लिए मूलतः आधुनिक प्रौद्योगिकी का प्रयोग किया जाता है, किंतु प्रौद्योगिकी की मात्र उपस्थिति ही जन संचार की अभिव्यक्ति नहीं है। जनसंचार माध्यमों का लक्ष्य हमेशा भिन्न-भिन्न वर्गों के अज्ञातनामा दर्शक/श्रोता समूह होते हैं।

क्या संचार-माध्यम या मीडिया का अर्थ केवल रेडियो और टीवी है? नहीं, सभी प्रकार के उपग्रह संचार, कंप्यूटर और बेतार प्रौद्योगिकी भी इसमें शामिल हैं। मीडिया काफी परिवर्तन और विकास से गुज़रा है। अब संचार प्रक्रिया के लिए मीडिया के रूप में असंख्य आधुनिक प्रौद्योगिकियाँ उपलब्ध हैं।

संचार माध्यमों का वर्गीकरण और कार्य

संचार माध्यमों को दो वृहत् श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है, पारंपरिक और आधुनिक संचार माध्यम।

पारंपरिक संचार माध्यम – पिछले कुछ समय तक अधिकांश ग्रामीण विस्तार-कार्य पूर्णतः मेलों और रेडियो जैसे पारंपरिक संचार माध्यमों पर निर्भर था। आज भी स्थिति कुछ ऐसी ही है। ग्रामीण और दूरस्थ क्षेत्रों में अंतर्वैयक्तिक संचार माध्यम मुख्य रूप से संचार का सर्वाधिक प्रयुक्त और प्रभावी माध्यम है। अन्य पारंपरिक लोक संचार माध्यम के उदाहरण हैं– कठपुतली, लोक नृत्य, लोक रंगमंच, मौखिक साहित्य, मेले और त्यौहार, अनुष्ठान और प्रतीक, संकेत, पोस्टर, पत्र-पत्रिकाएँ और अन्य स्थानीय मुद्रित सामग्री। पुरातन काल से ही विभिन्न पारंपरिक लोक संचार माध्यमों का उपयोग संचार के देशी माध्यमों के रूप में किया जाता रहा है। इसके कुछ अति

लोकप्रिय उदाहरण हैं– पारंपरिक लोक रंगमंच अथवा नाटक, जैसे *जात्रा* (बंगाल), *रामलीला* और *नौटंकी* (उत्तर प्रदेश), *बिदेसिया* (बिहार), *तमाशा* (महाराष्ट्र), *यक्षगान, दशावतार* (कर्नाटक) या *भवाई* (गुजरात)। इसी प्रकार के विभिन्न मौखिक साहित्य और संगीत के मिश्रित रूपों में मूलतः लोक या जनजातीय गीत और नृत्य, जैसे– *बोल* और *भतियाली* (बंगाल), *स्ना* और *दादोरिया* (मध्य प्रदेश), *दूहा* और *गरबा* (गुजरात), *चकरी* (कश्मीर), *भांगड़ा* और *गिद्दा* (पंजाब), *कजरी, चैती* (उ.प्र.) और *आल्हा* (उ.प्र. और बिहार,) *पौडा* और *लावनी* (महाराष्ट्र), *बिहू* (असम), *मांड* और *पनिहारी* तथा *चारणों, भाटों* (राजस्थान) द्वारा गाए जाने वाले गीत शामिल हैं। देश के उत्तर-पूर्वी और अन्य जनजातीय समूहों के ऐसे विभिन्न ढोल महोत्सव हैं, जिनमें ढोल की अत्यंत लयबद्ध तालों के साथ नाच और गाने का आयोजन होता है। अनेक प्रकार के कठपुतली कार्यक्रम भी मनोरंजन के साथ-साथ संदेश पहुँचाने के लिए आम संचार माध्यम की भूमिका निभाते हैं। इसमें सबसे आम हैं, डोरी से नचाई जाने वाली कठपुतली अथवा 'सूत्रधारिका', जिसका प्रचलन मुख्यतः राजस्थान और गुजरात में है, और छाया पुतली, जो देश के दक्षिणी हिस्सों में अधिक प्रचलित है। इसके साथ ही असंख्य त्यौहार, मेले, सामाजिक अनुष्ठान, उत्सव और यात्राएँ भी हैं जिनके द्वारा देश भर के विविध संप्रदायों के संदेशों, अभिव्यक्तियों, भावनाओं और परंपराओं का संप्रेषण होता है।

बदलते समय के साथ यह स्पष्ट है कि पारंपरिक संचार माध्यम आधुनिक दर्शकों/श्रोताओं के लिए विविध जानकारी या सूचना संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए न तो पर्याप्त हैं और न ही पूर्णतः समर्थ हैं। अतः संचार माध्यम की अनेक नयी प्रौद्योगिकियाँ लोकप्रिय बन गई हैं।

आधुनिक संचार माध्यम – आधुनिक प्रौद्योगिकी के आगमन से, संचार माध्यमों का आश्चर्यजनक विस्तार हुआ है। नयी संचार प्रौद्योगिकियाँ, जैसे मोबाइल फ़ोन, ऐसी आकर्षक विशेषताओं के साथ आ रहे हैं, जिनसे ब्रॉडकास्ट (प्रसारण) की गुणवत्ता और क्षमता में सुधार हुआ है। इन उपस्करों का आकार सुविधाजनक होता है जिसके कारण ये ग्रामीण और दूरस्थ क्षेत्रों में उपयोग के लिए सुकर हो गए हैं। इनसे आधुनिक संचार प्रौद्योगिकी की पहुँच भी बढ़ी है। कंप्यूटरों की उपलब्धता और इंटरनेट सुविधा से संचार माध्यम ने एक नए युग में प्रवेश किया है। रेडियो, उपग्रह टेलीविज़न, आधुनिक मुद्रण माध्यम, फ़िल्म प्रदर्शन की विभिन्न पद्धतियाँ, ऑडियो कैसेट और कॉम्पैक्ट डिस्क प्रौद्योगिकी, केबल और बेतार प्रौद्योगिकी, मोबाइल फ़ोन, वीडियो फ़िल्म और वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग आधुनिक संचार माध्यम के कुछ उदाहरण हैं।

क्रियाकलाप 6

अपने राज्य के शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में प्रयुक्त विभिन्न लोक संचार माध्यमों के बारे में सूचना एकत्र करें। यदि आपके राज्य में जनजातीय क्षेत्र हैं, तो वहाँ से संबंधित लोकसंचार माध्यमों की जानकारी एकत्र कीजिए।

संचार माध्यमों के कार्य – पिछले अध्यायों में आपको जानकारी मिली कि आपकी किशोरावस्था में संचार माध्यम आपको प्रभावित कर सकता है। आइए देखें, यह कैसे होता है –

1. *सूचना* – इसमें सूचना प्रदान करना और सूचना का आदान-प्रदान करना दोनों शामिल हैं। आज सूचना एक शक्ति है। विभिन्न संचार माध्यमों, जैसे–रेडियो, टेलीविज़न, पत्रिकाएँ और समाचार-पत्रों आदि के ज़रिए संचार को सुकर बनाया जाता है।
2. *सहमत कराना/प्रेरणा देना* – हम अपने समक्ष आई धारणा या विचार को हमेशा स्वीकार नहीं करते। दर्शक/श्रोता को किसी धारणा के स्वीकार करने के लिए तैयार करने के लिए उपयुक्त संचार माध्यम का उपयोग किया जा सकता है। इसके लिए दर्शक/श्रोता की मनोदशा और उसकी सामाजिक-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि की गहन समझ ज़रूरी है।
3. *मनोरंजन* – पारंपरिक और आधुनिक संचार माध्यम, मनोरंजन के अनेक विकल्प प्रदान करते हैं, जो लोक संचार माध्यम से शुरू होकर मौखिक परंपरा से 'सीधे घर तक' (डी.टी.एच.) टेलीविज़न द्वारा प्रसारित होता है। शैक्षिक प्रयोजनों में भी शिक्षा को आसान और रोचक बनाने के लिए संचार माध्यमों का प्रयोग मनोरंजक रूप से किया जाता है।
4. *व्याख्या* – संचार माध्यम का प्रयोग विशेषकर चित्रलेखीय प्रस्तुतीकरण, तथा तथ्यों एवं आंकड़ों, कई जटिल और कठिन संकल्पनाओं को आसान बनाता है। उदाहरण के लिए, मानचित्र या ग्लोब के मॉडल की सहायता से किसी भूगोलीय क्षेत्र को ढूँढ़ना और समझना, उसके बारे में केवल किसी पुस्तक में पढ़ने से आसान होता है।
5. *मूल्यों का संप्रेषण* – संचार माध्यमों से यह भी अपेक्षा है कि वे हितकारी मूल्यों के संप्रेषण के द्वारा एक स्वस्थ समाज के विकास को बढ़ावा दें, उदाहरणार्थ – मूल्यों के बारे में शिक्षा देने हेतु कहानी के रूप में कठपुतली और कार्टून फ़िल्मों का प्रयोग।
6. *शिक्षण अथवा प्रशिक्षण* – उपयुक्त संचार माध्यम की सहायता से स्थानीय भाषा में नए अधिगम अनुभवों और स्थानीय समस्याओं पर ध्यान केंद्रित करना हमेशा अध्ययन अध्यापन अनुभव में वृद्धि करता है। इनमें विभिन्न संकल्पनाओं पर आधारित मुद्रित शिक्षण – अधिगम सामग्री के अंत:क्रियापरक अनुदेश वाले, वीडियो, ऑडियो कैसेट और डिस्क शामिल हैं।
7. *समन्वयन* – आधुनिक पारस्परिक क्रियापरक संचार प्रौद्योगिकियों के आने से, दूरी और पारस्परिक निकटता का महत्त्व कम हो गया है। संचार की गति, कार्यक्षेत्र और परिशुद्धता इस सीमा तक बढ़ गई है कि अब एक स्थान पर बैठकर पूरे भौगोलिक क्षेत्र में फैली वृहत् परियोजनाओं का समन्वय करना बहुत आसान है।
8. *व्यवहारगत परिवर्तन* – विभिन्न क्षेत्रों से संबंधित सभी विस्तार शिक्षा कार्यक्रम, चाहे वह स्वास्थ्य हो, साक्षरता हो, पर्यावरणीय मुद्दा हो, सशक्तीकरण कार्यक्रम हो और नव-प्रवर्तनों को अपनाना हो, प्रभावी संचार की कला और तकनीक पर निर्भर करता है। संचार माध्यम ऐसे सभी उपयोगी संदेशों के संप्रेषण का मुख्य वाहक बना रहता है, जिसकी स्वीकार्यता से लक्षित लोगों में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष व्यवहारगत परिवर्तन होता है।
9. *विकास* – संचार माध्यम राष्ट्रीय विकास का एक उत्प्रेरक (माध्यम) है। यह विशेषज्ञों और आम व्यक्तियों को आपस में मिलाता है। इसलिए विकास प्रक्रिया में संचार का स्थान

अग्रणी है। संचार माध्यमों ने विकास की गति को तीव्रता प्रदान की है और संचार के माध्यम से लोगों को निकट लाकर, इस विश्व को परस्पर जोड़ दिया है।

लोगों तक पहुँचने के लिए संचार और संचार माध्यम, आधुनिक प्रौद्योगिकी का प्रयोग करते हैं। इसके विषय में हम अगले भाग में पढ़ेंगे।

6.3 संचार प्रौद्योगिकी क्या है?

वैश्विक परिदृश्य संचार क्रांति से गुज़र रहा है और संचार प्रौद्योगिकी बहुत तेज़ी से बदल रही है। जो आज नया है, वह कल पुराना हो सकता है। बहुत कम समय में लोग सब कुछ जानना चाहते हैं। सूचना की अत्यधिकता है, और वह आसानी से उपलब्ध है, तथा पारंपरिक और आधुनिक माध्यमों की विस्तृत विविधता के माध्यम सबकी पहुँच में हैं। यहीं पर संचार प्रौद्योगिकी एक अहम भूमिका निभा रही है।

हम अलग-अलग समय में (भूत और वर्तमान में), अलग-अलग पृष्ठभूमियों में, उदाहरणार्थ ग्रामीण/शहरी/जनजातीय, संचार के लिए अलग-अलग माध्यमों और संचार प्रौद्योगिकियों का प्रयोग करते रहे हैं।

हम सभी जानते हैं कि दूरी खत्म हो चुकी है। जो पहले दूर होता था, अब पास है, जो स्थानीय है, वह वैश्विक है।

– सैम पित्रोदा
अध्यक्ष, वर्ल्ड टेल

अब हम अपने आस-पास देखें। आप महसूस कर सकते हैं कि इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से जुड़ी नयी प्रौद्योगिकियों ने संचार माध्यमों में क्रांति ला दी है।

क्या आप जानते हैं कि भारत का पहला टीवी ट्रान्समीटर गुजरात के पिज गाँव में लगाया गया था, जिससे उपग्रह द्वारा दिल्ली से अन्य कार्यक्रमों के साथ-साथ स्थानीय भाषा के कार्यक्रम भी आते थे।

संचार प्रौद्योगिकी का संबंध **सूचना को नियंत्रित करने और संचार को सहायता देने के लिए विकसित और प्रयुक्त विभिन्न प्रौद्योगिकियों से है।** इसमें आधुनिक प्रौद्योगिकियाँ शामिल हैं, जिनका प्रयोग डाटा के प्रेषण के लिए किया जाता है, जो अनुरूप (इलेक्ट्रॉनिक संकेत) या अंकीय (डिजिटल) हो सकते हैं। ऐसे हार्डवेयर, संस्थागत-तंत्र तथा सामाजिक मूल्य हैं, जिनका उपयोग व्यक्ति सूचना एकत्र करने, संसाधित करने और आदान-प्रदान करने के लिए करते हैं।

संचार प्रौद्योगिकियों का वर्गीकरण

संचार प्रौद्योगिकियों की एक विस्तृत श्रृंखला उपलब्ध है। प्रायः ये दो समूहों में आती हैं–

(i) **केबल (भूमि) आधारित प्रौद्योगिकियाँ** – ये अधिक सस्ती और कम जटिल हैं। लैंडलाइन टेलीफ़ोन या बिना इंटरनेट के पर्सनल कंप्यूटर इस प्रौद्योगिकी के उदाहरण हैं।

(ii) **बेतार प्रौद्योगिकियाँ** – सामान्यतया इसमें कम आधारिक संरचना की आवश्यकता होती है, किंतु इनका प्रयोग केबल-आधारित प्रौद्योगिकियों से अधिक महंगा हो सकता है। रेडियो, माइक्रोवेव, उपग्रह बेतार टेलीफ़ोनी अथवा मोबाइल फ़ोन में 'ब्लू टूथ' प्रौद्योगिकी का प्रयोग इसके उदाहरण हैं।

क्रियाकलाप 7

'सूचना प्रौद्योगिकी – एक अभिशाप या वरदान?' पर अपनी कक्षा में एक सामूहिक चर्चा आयोजित करें और उसमें भाग लें।

रेडियो और टेलीविज़न ऐसी दो महत्वपूर्ण सूचना प्रौद्योगिकियाँ हैं जिन्होंने संचार माध्यम के रूप में कार्य करके पूरे संसार के परिदृश्य को बदल दिया।

रेडियो – भौगोलिक विस्तार, आय, शिक्षा, आयु, लिंग और धर्म की दृष्टि से रेडियो का पूरे विश्व के दर्शकों/श्रोताओं पर प्रभाव रहता है। घटना-स्थल पर (ऑन-द-स्पॉट) प्रसारण या अनुकारी प्रसारण के ज़रिए यह समय और स्थान के अवरोधों को पार कर सकता है। छोटे आकार के ट्रांजिस्टरों के प्रयोग से देश के दूरस्थ भागों में संचार प्राप्त करना संभव हो गया है।

टेलीविज़न – टेलीविज़न भारत में सन् 1959 में प्रारंभिक तौर पर शिक्षा के प्रभाव को बढ़ाने और ग्रामीण विकास की वृद्धि के लिए आया था। टेलीविज़न के प्रोग्रामों को बनाने में चाक्षुष आवर्धन, ध्वनि प्रवर्धन, अध्यारोपण, स्प्लिट-स्क्रीन प्रक्रिया, फेडिंग, ज़ूमिंग इत्यादि विभिन्न तकनीकों का उपयोग किया जाता है। ये तकनीकें इसे और अधिक प्रभावी बनाती हैं और दर्शक पर इसके प्रभाव को बढ़ाती हैं।

आधुनिक संचार प्रौद्योगिकियाँ

आधुनिक संचार प्रौद्योगिकियों की सूची लंबी है, हर दूसरे दिन हम मौजूदा प्रौद्योगिकी में नए विकासों के बारे में सुनते हैं। आधुनिक संचार प्रौद्योगिकियों के प्रमुख रूप, जिनका उपयोग व्यापक प्रयोजनों के लिए किया जाता है, निम्नलिखित हैं।

1. **माइक्रो कंप्यूटर –** कंप्यूटरों को मेनफ्रेम्स (बड़े आकार के और महंगे), मिनी कंप्यूटर (कम शक्तिशाली) और माइक्रो कंप्यूटर (माइक्रोचिप प्रौद्योगिकी पर आधारित) में वर्गीकृत किया जाता है। यह वर्गीकरण उनकी शक्ति, अनुदेशों के समुच्चय को पूरा करने में उनकी गति, और डाटा को एकत्र करके उसका संग्रह करने के लिए उपलब्ध स्मृति (मेमोरी), तथा उस कंप्यूटर द्वारा दी जाने वाली परस्पर संबद्धता की क्षमता पर आधारित है। माइक्रो कंप्यूटर के कार्यों में, खासकर विस्तार कार्य में संसाधन (प्रोसेसिंग), सभी प्रकार की सूचनाओं का रिकॉर्ड रखना, लेखाकरण, अनुसंधान तथा क्षेत्रकार्य के प्रयोजन के लिए अनुभवों और विविध विषयों के संग्रह की भूमिका निभाना और उचित मूल्य पर सूचना सामग्री को प्रकाशित करना आदि शामिल हैं। इसे इस दृष्टि से पारस्परिक क्रियात्मक कहा जा सकता है कि देखने वाले के पास अभीष्ट डाटा को देखने का विकल्प रहता है।

ब्लू टूथ प्रौद्योगिकी क्या है?

ब्लू टूथ प्रौद्योगिकी, मोबाइल पी.सी., मोबाइल फोन, और ध्वनि संचार करने वाले अन्य लघु उपकरणों के बीच एक अल्प लागत, अल्प-दूरी रेडियो आवृत्ति संपर्क है, जो 1 एम.बी.पी.एस. की दर पर ध्वनि और डाटा प्रेषित करने में समर्थ है, जिसकी गति समान्तर और श्रेणीबद्ध पोर्टों की औसत गति की तुलना में तीन से आठ गुना अधिक होती है। यह ठोस, अधातु वस्तुओं के माध्यम से प्रेषण कर सकता है।

इससे सेल फोन और हैंड्स फ्री हेड सेट या कार किट के बीच संचार हो सकता है और उस पर बेतार नियंत्रण किया जा सकता है।

2. **दृश्य पाठ –** टेलीफ़ोन नेटवर्क या केबल सिस्टम के माध्यम से मुख्य कंप्यूटर से घर के टीवी सेट तक प्रेषित इलेक्ट्रॉनिक पाठ सेवा को दृश्य पाठ या दृश्य-डाटा कहते हैं।
3. **इलेक्ट्रॉनिक मेल (ई-मेल)** – यह वह प्रक्रिया है जो सूचना को इलेक्ट्रॉनिक रूप में प्रेषक से ग्राही (प्राप्तकर्ता) तक भेजती है। ई-मेल प्रक्रिया थल डाक की तरह है, जिसे कंप्यूटर पर टाइप किया जाता है और मोबाइल के ज़रिए दूसरे कंप्यूटर को भेजा जाता है। यह मेल बॉक्स की व्यवस्था से, दो या दो से अधिक व्यक्तियों के संचार की एक आसान विधि है। संदेश कंप्यूटर में सुरक्षित रहता है, जो डाकघर के रूप में तब तक कार्य करता है, जब तक ग्राही उसके बारे में न पूछे। इस संदेश को टेलीफ़ोन से जुड़े मोडेम का प्रयोग करके देखा जा सकता है।

उपग्रह संचार

पिछले 30 वर्षों में उपग्रह संचार विश्व के लगभग सभी देशों में पहुँच गया है और इसने न केवल संचार में बल्कि मानव जीवन के विविध पहलुओं में क्रांति ला दी है।

यह क्या है?

विभिन्न प्रयोजनों के लिए उपग्रह प्रौद्योगिकी की सहायता से की जाने वाली संचार-प्रक्रिया उपग्रह संचार कहलाती है। उपग्रह को अंतरिक्ष में स्थापित किया जाता है और वायु-वाहित या अंतरिक्ष-वाहित प्लेटफार्मों पर लगाए गए प्रकाशीय संवेदकों की सहायता से प्राप्त सूचनाएँ विश्व भर में प्रेषित की जाती हैं।

उपग्रह प्रौद्योगिकी के विशिष्ट लक्षण

- इसमें किन्हीं भी दो बिंदुओं के बीच त्वरित और विश्वसनीय संचार बनाने की क्षमता है।
- यह एक ही समय में पर्याप्त विस्तृत क्षेत्र में एक जगह से विभिन्न जगहों तक एक साथ सूचना प्रेषित करती है।
- यह कई जगहों से एक मुख्य स्थान (केंद्र) में सूचना एकत्र करता है।

उपग्रह प्रौद्योगिकी के लाभ और अनुप्रयोग

- सुदूर संवेदन (रिमोट सेन्सिंग) अर्थात्, किसी दूरस्थ वस्तु को पकड़ पाना। इसके द्वारा आँकड़े तेज़ी से और बार-बार एकत्र किए जाते हैं। ये संवेदी डाटा ऐसे अनेक बिंब बनाते हैं, जो कई कामों में प्रयुक्त होते हैं। उदाहरणार्थ, ये बिंब (चित्र) प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता की सही स्थिति का पता लगाने में मदद करते हैं, जो प्राकृतिक संसाधनों के दक्षतापूर्ण उपयोग या मौसम के पूर्वानुमान में सहायता करते हैं, और जो कृषि और कृषि-आधारित उद्योगों के लिए सहायक हैं।
- अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी और भारतीय अंतरिक्ष विकास कार्यक्रम के उन्नत अनुप्रयोग।
- विश्व भर में उच्च-गुणवत्ता वाली दूरसंचार प्रणाली उपलब्ध कराना और बेहतर वैश्विक प्रतिस्पर्धा।
- दूरस्थ और अलग-विलग क्षेत्रों को भी विकास का लाभ उपलब्ध कराता है।
- उत्कृष्ट कोटि की और तीव्र संचार की उपलब्धता से इस विषय में की जाने वाली अनावश्यक-यात्रा में कमी आई है और शीघ्र निर्णय लेने की क्षमता सुकर हुई है, जिससे ऊर्जा और अन्य संसाधनों का संरक्षण बढ़ा है।

साइट – एक क्रांतिकारी सामाजिक प्रौद्योगिकीय प्रयोग

- उपग्रह अनुदेशात्मक टेलीविज़न प्रयोग (सेटेलाइट इंसट्रक्शनल टेलीविज़न एक्सपेरीमेंट, साइट) वर्ष 1976 में अमेरिका के एप्लीकेशन टेक्नोलॉजी सेटेलाइट (ए.टी.एस. 6) द्वारा किया गया था और अपनी किस्म का विश्व का सबसे बड़ा प्रयोग था।
- साइट से विकास, उपग्रह-आधारित अनुदेशात्मक टेलीविज़न प्रणाली, परीक्षण और प्रबंधन के क्षेत्र में मूल्यवान अनुभव प्राप्त हुए हैं, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में।
- साइट ने भारत जैसे विकासशील देशों के लिए, विकसित देशों में प्रभावपूर्ण जन संचार के तीव्र विकास में उपग्रह प्रौद्योगिकी की क्षमता का प्रदर्शन किया था।

इस प्रकार हम कह सकते है कि, साइट से यह सिद्ध हुआ है कि दूरस्थ क्षेत्रों में संचार की आधारिक संरचना का वितरण न केवल संभव है, बल्कि यह राष्ट्रीय विकास को बढ़ावा देने में पूरी तरह से योगदान दे सकता है। सामाजिक और तकनीकी उद्देश्यों तक पहुँचने की दिशा में साइट, हर तरह से सफल प्रयोग है। इससे उपग्रह प्रौद्योगिकी के उपयोग का मार्ग प्रशस्त हुआ है, खासकर भारत के ग्रामीण क्षेत्र में संचार के लिए टेलीविज़न के उपयोग हेतु।

4. **पारस्परिक क्रियात्मक वीडियो** – पारस्परिक क्रियात्मक वीडियो का संबंध ऐसे वीडियो-तंत्र से है जो कंप्यूटर और वीडियो का संयोजन है। यह पाठ स्थिर फोटो वीडियो, ऑडियो, स्लाइडों ओवरहेडों आदि का उपयोग करके बहु-माध्यम (मल्टी-मीडिया) को अपनाता है। विभिन्न रूपों में संगृहीत संदेशों से उपभोक्ता अपनी इच्छानुसार संदेश प्राप्त करते हैं। उपभोक्ता की सिस्टम के प्रति जो अनुक्रिया होती है उसी के अनुसार आगे का मार्ग निर्धारित होता है।
5. **दूर-सम्मेलन** – दूर-सम्मेलन एक पारस्परिक क्रियात्मक समूह संचार है। इसका संबंध भौगोलिक रूप से अलग स्थित व्यक्तियों, भौतिक रूप से दूरस्थ लोगों के बीच संवाद स्थापित करना है। दूर संचार में हुए विकास के फलस्वरूप लंबी दूरियों की यात्रा किए बिना भी बैठकें आयोजित करना संभव हो गया है।

क्रियाकलाप 8

कोई ऐसे दो संदेश लिखिए, जो सड़क के किनारे लगे विज्ञापनों में से आपको याद हैं–

- संदेश ....
  अर्थनिरूपण..
  ....
- संदेश ....
  अर्थनिरूपण..
  ....

इस प्रकार संचार प्रौद्योगिकी ने संचार को अत्यधिक सुविधाजनक बना दिया है। विश्व भर में अधिक-से-अधिक लोग इन प्रौद्योगिकियों का प्रयोग कर रहे हैं। फिर भी मानव संपर्क की अनदेखी नहीं की जा सकती। रोज़मर्रा की जिदगी में भी हमें अलग-अलग व्यक्तियों से आमने-सामने संवाद करना पड़ता है। अतः प्रत्येक व्यक्ति को प्रभावी संचार के लिए कुछ आधारभूत कौशलों का विकास करना चाहिए। इसके बारे में हम 'प्रभावी संचार कौशल' विषयक अगले अध्याय में जानेंगे।

मुख्य शब्द

संचार, सामूहिक संचार, जन संचार, शाब्दिक और गैर-शाब्दिक संचार, संचार माध्यम (मीडिया), संचार प्रौद्योगिकी, ब्लू-टूथ प्रौद्योगिकी, उपग्रह संचार।

■ समीक्षात्मक प्रश्न

1. संचार शब्द से आप क्या समझते हैं? मौखिक और गैर-शाब्दिक संचार की विभिन्न विधियाँ क्या हैं?
2. संचार प्रक्रिया को उदाहरण द्वारा स्पष्ट करें।
3. "संचार प्रक्रिया में जितनी अधिक इंद्रियाँ शामिल होंगी, संचार उतना ही प्रभावी और दीर्घ होगा"। औचित्य सहित टिप्पणी कीजिए।
4. संचार माध्यम दैनिक जीवन को कैसे प्रभावित करते हैं? विभिन्न प्रकार के संचार माध्यमों की व्याख्या करें।
5. संचार प्रौद्योगिकी की परिभाषा लिखिए। ऐसी दो आवश्यक संचार प्रौद्योगिकियों की सविस्तार चर्चा करें, जिनसे संचार क्षेत्र में क्रांति आ गई है। अपने उत्तर का औचित्य भी दें।

प्रभावशाली संप्रेषण कौशल

अध्याय
7

उद्देश्य

इस अध्याय को पूरा करने के बाद शिक्षार्थी समर्थ होंगे–

- संप्रेषण कौशलों का अर्थ स्पष्ट करने में,
- संप्रेषण के महत्त्व पर परिचर्चा करने में,
- विभिन्न संप्रेषण कौशलों का वर्णन करने में, और
- स्वयं अपने संप्रेषण कौशलों का अधिक विकास करने में।

प्रभावशाली ढंग से संप्रेषण करने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को संप्रेषण के साधनों से संपन्न होना चाहिए, चाहे वह संप्रेषण व्यक्तिगत मोर्चे पर हो अथवा कार्य-स्थल पर। विशेषज्ञों के अनुसार अच्छा संप्रेषक होना व्यक्तिगत एवं व्यावसायिक जीवन की सफलता की दिशा में आधी लड़ाई पर विजय प्राप्त करना है। यदि कोई व्यक्ति अच्छा श्रोता एवं वक्ता है तब गलतफ़हमी की कोई संभावना बहुत कम या नहीं के बराबर रहती है। इस प्रकार, अपने को अच्छी तरह व्यक्त न कर पाना अथवा कही गई बात को ठीक ढंग से न सुन पाना गलतफ़हमी के प्राथमिक कारण होते हैं।

संप्रेषण-प्रक्रिया में हम विभिन्न कौशलों का इस्तेमाल करके सूचना प्राप्त करते हैं अथवा भेजते हैं, तथा संप्रेषण प्रक्रिया की प्रभाविता उपयुक्त संप्रेषण-कौशलों के प्रयोग पर निर्भर करती है। अतः, उपयुक्त संप्रेषण कौशल प्रत्येक व्यक्ति के लिए महत्वपूर्ण हैं। संप्रेषण प्रक्रिया के प्रारंभ होने मात्र से यह सुनिश्चित नहीं हो जाता कि वांछित प्राप्तकर्ता ने संदेश की विषय-वस्तु को उसी सामान्य पारस्परिक समझ के अनुसार जिस रूप में प्रेषक ने उसे भेजा था, ग्रहण कर लिया है। ऐसा इसलिए है क्योंकि संप्रेषण प्रक्रिया के विभिन्न क्रमिक चरणों पर विभिन्न विरूपण अर्थात् तोड़-मरोड़ या जोड़-तोड़ हो सकते हैं। संचार में अंतराल को कम करने के लिए व्यक्ति के संप्रेषण-कौशल को प्रखर करना होगा ताकि संप्रेषण-प्रक्रिया अधिक प्रभावशाली हो सके।

7.1 संप्रेषण कौशल का अर्थ

- संप्रेषण कौशल का अर्थ है भाषा (ग्राही) का उपयोग करने और सूचना को अभिव्यक्त करने (व्यंजक) की क्षमताएँ। इस प्रकार, संप्रेषण कौशल वे योग्यताएँ हैं जो सूचना को

प्रभावशाली ढंग से भेजने एवं प्राप्त करने में हमारी मदद करती हैं। ये स्वाभाविक अथवा उपार्जित हो सकती हैं।

- संप्रेषण कौशल विविध व्यवहारों की वह शृंखला है जिनसे अन्य व्यक्ति को सूचना प्रेषित होती है। इस प्रक्रिया के लिए सोचने, बोलने, सुनने, पढ़ने, लिखने, विचार-कल्पना करने तथा शरीर की मुद्रा से संबंधित एक या उससे अधिक कौशलों की ज़रूरत पड़ती है। इन कौशल समूहों से हम विभिन्न परिस्थितियों में विभिन्न तरीके से सूचना को अभिव्यक्त कर सकते हैं तथा उसे प्राप्त कर सकते हैं।
- मनोवैज्ञानिक तौर पर विविध व्यवहारों के उस समुच्चय को संप्रेषण-कौशल कहते हैं जो आदान-प्रदान की जा रही विषय-वस्तु की पारस्परिक समझ सृजित करने के लिए सामान्य सूचना के संप्रेषण एवं आदान-प्रदान में मदद करते हैं।

इस तरह संप्रेषण कौशल वह योग्यता है जो व्यक्ति को आदान-प्रदान की जा रही विषय-वस्तु की पारस्परिक समझ को सृजित करने के लिए अनेक प्रकार के श्रोतागण के साथ सूचना को निरंतर एवं प्रभावशाली ढंग से आदान-प्रदान करने में मदद करती है। इनमें श्रोतागण एवं स्थिति के अनुसार बोले गए एवं लिखे गए शब्दों, कोड एवं विषय-वस्तु अनुक्रम, प्रयुक्त विषय-वस्तु एवं शरीर की मुद्रा का प्रयोग, दृश्य कल्पना करना एवं विषय-वस्तु का संरूपण शामिल है।

सूचना भेजने एवं प्राप्त करने वाले दोनों में संप्रेषण कौशल होना आवश्यक है। जो व्यक्ति संदेश भेजता है उसमें श्रोतागण के प्रकार, उनकी आवश्यकताओं तथा हितों को ध्यान में रखते हुए सोचने, विचार या दृश्य-कल्पना करने तथा वांछित संदेश को निर्मित करने के कौशल होने चाहिए। प्रेषक द्वारा हिंदी के छह क (क्या, कहाँ, क्यों, कब, और किसको तथा कैसे) (अथवा अंग्रेज़ी के पाँच W- What? Where? Why? When? Whom? तथा एक H अर्थात् How) को ध्यान में रखा जाना चाहिए। इसी तरह जो व्यक्ति संदेश प्राप्त करता है उसे बिना अनुमान लगाए पूर्वाग्रहों को अलग रखते हुए, पंक्तियों में निहित विषय-वस्तु को सक्रिय रूप से सुनते हुए, देखते हुए, पढ़ते हुए संदेश प्राप्त करना चाहिए। कहा जाता है कि प्रकृति ने हमें ज्यादा सुनने और कम बात करने के लिए दो कान तथा एक मुँह दिया है। लेकिन क्या हम उसका अनुपालन करते हैं? श्रोता को सुनने के लिए एक कान तथा जो कुछ कहा जा रहा है, उसे महसूस करने के लिए दूसरे कान का प्रयोग करना चाहिए। इससे प्राप्तकर्ता को संदेश को बेहतर ढंग से समझने में मदद मिलेगी।

क्या आपको पता है कि 70 प्रतिशत संदेश गलत समझे जाते हैं, उनकी गलत व्याख्या की जाती है, उन्हें अस्वीकार किया जाता है, उन्हें तोड़ा-मरोड़ा जाता है तथा पूरी तरह अनसुना किया जाता है? प्रभावशाली संप्रेषण-कौशल से हम इन परिसीमाओं को कम कर सकेंगे।

7.2 संप्रेषण कौशल के प्रकार

कहने का ढंग कही जा रही बात के बराबर या उससे कहीं ज्यादा महत्वपूर्ण है। शरीर की मुद्रा या शरीर की भाषा शाब्दिक भाषा के बराबर या उससे कहीं ज़्यादा महत्वपूर्ण है। हम किसी सूचना को कितने प्रभावशाली ढंग से भेज सकते हैं अथवा प्राप्त कर सकते हैं, यह इस बात पर निर्भर करता है कि हम निम्नलिखित में से एक अथवा एक से अधिक संप्रेषण कौशलों का इस्तेमाल कितने कारगर ढंग से करते हैं–

- चिंतन
- पठन

- लेखन
- श्रवण
- बोलना
- गैर-शाब्दिक (भाषेतर) संप्रेषण

चिंतन

यह एक अंतरावैयक्तिक संप्रेषण कौशल है। इसमें व्यक्तिगत विचार, अनुचिंतन, सोच-विचार एवं मनन सन्निहित होता है। चिंतन व्यक्ति को अपने विचारों, अभिमतों, निर्णयों एवं भावनाओं को चुनने तथा संगठित करने के योग्य बनाता है। एक प्रकार से, यह अमूर्त प्रक्रिया है क्योंकि कोई भी व्यक्ति सोच विचार की प्रक्रिया को तब तक नहीं देख सकता है जब तक उसे शब्दों, भावनाओं अथवा लेखनों के माध्यम से अभिव्यक्त नहीं किया जाता। संप्रेषण में यह मूलभूत कदम है। आपकी क्रियाएँ एवं अभिव्यक्तियाँ इस बात पर निर्भर करती हैं कि आप क्या और कैसे सोचते हैं।

आप चिंतन के कौशल का कैसे विकास कर सकते हैं?

- आप जो सोच रहे हैं उस पर ध्यान केंद्रित करें।
- अपनी चिंतन प्रक्रिया के दौरान ध्यान भंग नही होने दें।
- सृजनात्मकता, समस्या समाधान, दल के रूप में कार्य, विवेचनात्मकता तथा लचीलेपन के कौशलों को विकसित करके सोच-विचार को मजबूत बनाएँ।
- हमेशा सकारात्मक रहें।

पठन (पढ़ना)

यह मुद्रित अथवा लिखित सामग्री से अर्थ प्राप्त करने की योग्यता है। मनोरंजन, सूचना एवं ज्ञान प्राप्त करना पठन के लिए कुछ उत्प्रेरक कारक हैं। निपुणता से पढ़ने के लिए व्यक्ति में भाषा का ज्ञान, धारा-प्रवाह पठन, शब्दावली, पठन बोध, संज्ञान एवं विकोडन अपेक्षित हैं। हर व्यक्ति 6 वर्ष की आयु तक भाषा तथा उसकी ध्वनियों से परिचित हो जाता है। सात वर्ष की उम्र तक वह आरंभिक पठन अवस्था अथवा विकोडन अवस्था में होता है। विकोडन कौशल का निरंतर सुधार होता रहता है तथा बच्चे 8 वर्ष की आयु तक शब्द की सही-सही पहचान के साथ उसे तेजी से भी करने लगते हैं। बच्चा 9 वर्ष की आयु तक प्रवाहपूर्ण पठन सीख लेता है तथा उसमें पठन के लिए रुचि विकसित हो जाती है। 14 से 19 वर्ष की आयु तक वह यह विश्लेषण कर पाता है कि लोग क्या-क्या पढ़ते हैं, वह विभिन्न दृष्टिकोणों को समझता है तथा जो वह पढ़ रहा/रही है उस पर विवेचनापूर्वक प्रतिक्रिया करता है।

आप पठन कौशल कैसे विकसित कर सकते हैं?

- इस कौशल के लिए अभिरुचि का विकास करें, उदाहरणार्थ, आप उस विषय से शुरू करें जिसमें आपकी रुचि हो।
- पढ़ते समय पहले बाएँ से दाएँ तथा उसके बाद पंक्ति से पंक्ति तक लयबद्ध रूप से पढ़ने के तरीके का अनुसरण करें।
- भौतिक स्थितियाँ, जैसे – बाँईं तरफ से पर्याप्त प्रकाश, समुचित आकार के अक्षर, तथा शांतिपूर्ण एवं शांत वातावरण वांछनीय है।

क्रियाकलाप 1

अपनी पठन आदतों को जानने के लिए निम्नलिखित की सूची बनाएँ–

- आप प्रति सप्ताह पाठ्यपुस्तक, पत्रिका अथवा उपन्यास के औसतन कितने पृष्ठ पढ़ते हैं?
- आप अपने पाँच मित्रों द्वारा पढ़े जाने वाले तथा आप जिस प्रकार का साहित्य पढ़ते हैं उनकी तुलना करें।

लेखन

कभी-कभी लेखन ही संप्रेषण का सर्वोत्तम तरीका सिद्ध होता है तथा कई बार किसी का संदेश प्राप्त करने का एकमात्र तरीका भी होता है। लेखन के संबंध में व्यक्ति को इस तथ्य की जानकारी होनी चाहिए कि यदि कोई चीज़ लिखित रूप में जाती है तो उसे वापस नहीं लिया जा सकता है। इस तरीके से किया गया संप्रेषण मौखिक संप्रेषण की अपेक्षा अधिक मूर्त होता है क्योंकि इसमें संचार की त्रुटियों और गलतियों के लिए बहुत कम गुंजाइश होती है। लेखन के माध्यम से संप्रेषण करने वालों के समक्ष नयी चुनौतियाँ आती हैं, जिसमें वर्तनी, व्याकरण, विराम चिह्न, लेखन शैली तथा शब्दावली आदि शामिल हैं। आज की प्रौद्योगिकी (उदाहरणार्थ कंप्यूटर) से कुछ ऐसे विश्वसनीय साधन प्राप्त होते हैं जो ज्ञापन, पत्र अथवा प्रस्ताव आदि औपचारिक लेखन को अधिक आसान बनाते हैं। इनमें वर्तनी-जाँच एवं व्याकरण-जाँच का भी प्रावधान होता है। छात्र/छात्राओं के लिए ये कौशल परीक्षाओं में निबंध, नियत कार्य, औपचारिक पत्र तथा वर्णनात्मक उत्तर लिखने में उपयोगी सिद्ध होते हैं।

अच्छे लेखन के लिए कुछ दिशा-निर्देश

- शिष्टेतर भाषा का इस्तेमाल न करें (उदाहरणार्थ बच्चों शब्द के स्थान पर छौना, मेमना आदि शब्दों का प्रयोग न करें।)
- संक्षिप्तियों अर्थात् संक्षिप्त शब्दों के प्रयोग का प्रयास न करें (उदाहरणार्थ – अपार्टमेंट के लिए अपा.)
- जहाँ तक संभव हो प्रतीकों का प्रयोग न करें, जब तक कि लेखन विज्ञान, गणित अथवा तकनीकी विषयों के लिए न हो अथवा प्रतीक व्यापक रूप से पहचाने जाने वाले प्रतीक न हों। (उदाहरण के लिए अंग्रेज़ी के 'दक' शब्द के लिए '-' प्रतीक का प्रयोग किया जाता है)
- पिष्टोक्तियों का सावधानीपूर्वक प्रयोग करें (उदाहरण के लिए ...मध्यम वर्ग का है)
- लोगो, कंपनियों के नामों तथा शब्दों की सही-सही वर्तनी लिखें।
- जब संख्या 10 से कम हो तब अंकों को शब्दों के रूप में व्यक्त करें अथवा वाक्य का आरंभ इस प्रकार करें (उदाहरण के लिए – दस वर्ष पहले, मेरी बहन तथा मैं...) 10 की संख्या अथवा 10 की संख्या से अधिक के मद को आंकड़े के रूप में अभिव्यक्त करें। (उदाहरणार्थ – मेरे भाई के पास 13 मैचबॉक्स कारें हैं)।
- समुचित विराम-चिह्न का प्रयोग करना चाहिए।
- अपने वाक्यों को छोटा रखें।

क्रियाकलाप 2

निम्नलिखित के नमूने एकत्रित करें –
- वैज्ञानिक लेखन (उदाहरणार्थ पत्रिका अथवा पाठ्यपुस्तक से)
- नर्सरी स्कूल में सुनाई जाने वाली कहानियाँ
- पत्रिका से कहानियाँ
- समाचार-पत्र का संपादकीय

उपर्युक्त प्रत्येक लेखन में इस्तेमाल की गई शैलियों में अंतर का अध्ययन कीजिए।

श्रवण

संप्रेषण प्रक्रिया में हम या तो सूचना भेजते हैं अथवा प्राप्त करते हैं। ध्यानपूर्वक सुनना सूचना की प्राप्ति के लिए महत्वपूर्ण है। हम सभी प्रत्येक दिन सुबह से शाम तक विभिन्न प्रकार के संदेश सुनते हैं। किंतु हम कुछ संदेश आसानी से याद रख पाते हैं तथा अन्य चीजें भूल जाते हैं। श्रवण विभिन्न कौशलों का संयोजन है जो सुनने, संदेश साझा करने वाले व्यक्ति के प्रति अभिवृत्ति तथा संदेश की विषय-वस्तु के साथ-साथ भेजने वाले तथा संदेश के प्रति हमारे मनोवैज्ञानिक जुड़ाव से संबंधित है। इसमें संदेश और वक्ता को समझने की इच्छा, आदर का भाव तथा स्वीकृति और संदेश के प्रति दूसरों के बोध को समझने और मूल्यांकन करने की स्वैच्छिक अभिवृत्ति की आवश्यकता होती है। श्रवण के लिए अत्यधिक ध्यान केंद्रित करने तथा ऊर्जा की आवश्यकता होती है। श्रवण-कौशल स्वाभाविक या अर्जित होते हैं। इसे कुछ आधारभूत सिद्धांतों का इस्तेमाल करके उपार्जित किया जा सकता है।

विद्यार्थी स्कूल में कुल समय का 20 प्रतिशत सुनने में बिताते हैं। यदि टेलीविज़न को देखने तथा उनके द्वारा की जाने वाली बातचीत का आधा हिस्सा भी शामिल किया जाए तो विद्यार्थी जागृत अवस्था का लगभग 50 प्रतिशत सुनने में व्यतीत करते हैं। कक्षा में बिताए गए इन घंटों के लिए श्रवण की मात्रा लगभग 100 प्रतिशत हो सकती है।

आप सुनने के कौशल को कैसे विकसित कर सकते हैं?
- वक्ता को ध्यानपूर्वक एवं तनावरहित होकर सुनें।
- सुनते समय बात न करें।
- सुनने के लिए समानुभूति की भावना से श्रोता के विचारों एवं संदेश के दृष्टिकोण को अलग रखा जाना चाहिए। श्रोता के लिए दूसरों के दृष्टिकोण से चीज़ों को जाँचने एवं देखने की इच्छा एवं अभिलाषा होनी चाहिए।
- संदेश को समझने के लिए शब्दों एवं भावनाओं को सुनने तथा प्रकट करने का प्रयास कीजिए।
- वक्ता के प्रेरणार्थक भावों, अभिव्यक्ति तथा अभिवृत्ति जैसे गैर-शाब्दिक संदेशों से सावधान रहें।

''सुनना, गतिशील होना है। श्रवण बातचीत करने वाले द्वारा शारीरिक और मनोवैज्ञानिक रूप से प्रेरित होना। ...अगतिशील एवं आँख न झपकने वाले व्यक्ति को निश्चित तौर पर गैर श्रोता कहा जा सकता है। ...जब अन्य दृश्य गतिशीलता तक जाती है तथा छह सेकेंड से भी कम आँख झपकने की दर गिर जाती है, तो व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए श्रवण बंद हो जाता है''

फ्रेंकलिन अर्नेस्ट, जूनियर

बोलना

बोलना सर्वाधिक आधारभूत संप्रेषण कौशलों में से एक है। भाषण से अभिप्राय बोली गई भाषा में प्रस्तुति की प्रक्रियाओं में बोधगम्यता तथा ध्वनियों के प्रयोग से है। अपने रोज़मर्रा के जीवन में हम सूचना देने, भावनाओं के आदान-प्रदान एवं अन्य कारणों से परिवार के सदस्यों, मित्रों तथा अन्य लोगों से व्यवसाय एवं कार्य के संबंध में बातचीत करते हैं।

किसी समूह के सामने बोलना तथा सार्वजनिक तौर पर बोलना ये दो बोलने के महत्वपूर्ण प्रकार के कौशल हैं। सार्वजनिक तौर पर बोलना श्रोताओं को सूचित करने, प्रभावित करने, राजी करने, प्रेरित करने अथवा मनोरंजन करने के इरादे से संरचित, वाक् कौशल द्वारा सोद्देश्य तरीके से लोगों के समूह के साथ बातचीत करने की प्रक्रिया है।

ज़्यादातर महान वक्ताओं में भाषण कौशल एवं उसकी कारगरता को प्रदर्शित करने की स्वाभाविक योग्यता होती है जो किसी विशेष प्रयोजन के लिए श्रोता को आकृष्ट एवं प्रेरित करने में सहायक होती है। भाषा एवं वाक्पटुता (प्रभावशाली भाषण) सार्वजनिक व्याख्यान तथा अन्तर्वैयक्तिक संचार के दो सबसे अधिक महत्वपूर्ण पहलुओं में से हैं। यह सुनिश्चित करने के लिए कि लोग आपके शाब्दिक संदेशों को समझ रहे हैं और उन्हें याद रख रहे हैं, चार स्पष्ट एवं सरल तरीके हैं–

- प्रस्तुतीकरण के प्रयोजन को समझना।
- संदेश को स्पष्ट एवं संक्षिप्त रखना।
- बोलने से पहले तैयारी या पूर्व अभ्यास करना।
- संदेश देते समय आपके द्वारा अभिव्यक्त विचारों में पूर्ण स्पष्टता हो।

आप अपनी बात या प्रस्तुतीकरण को प्रभावशाली कैसे बना सकते हैं?

अपनी बात एवं प्रस्तुतीकरण पर कार्य शुरू करने से पहले यह आवश्यक है कि आप निम्नलिखित को समझ लें–

आप **किससे** बात करने जा रहे हैं? उनकी रुचियाँ, पूर्वमान्यताएँ एवं मूल्य क्या हैं? उनमें और अन्य लोगों में क्या समानताएँ हैं? वे अन्यों से किस तरह भिन्न हैं?

आप **क्या** संप्रेषित करना चाहते हैं? विषय-वस्तु का पर्याप्त ज्ञान आपकी सफलता का निर्णायक पहलू है। इस प्रश्न का उत्तर देने का एक तरीका यह है कि आप ''सफलता मानदण्ड'' के बारे में पूछें। आप कैसे जानेंगे कि आपने अपनी बात सफलतापूर्वक कब संप्रेषित की और कर भी पाए कि नहीं?

आप अपने संदेश को **किस प्रकार** अच्छी तरह संप्रेषित कर सकते हैं? आप अपने श्रोतागण को ध्यान में रखकर अपने शब्दों एवं गैर-शाब्दिक संकेतों का चयन कर सकते हैं। प्रस्तुतीकरण/बातचीत की शुरुआत, मध्य एवं समाप्त करने की योजना तैयार कीजिए। यदि समय रहे तथा उस स्थान पर संभव हो तो, दृश्य-श्रव्य सामग्री के प्रयोग पर विचार करें एवं उसके अनुसार दृश्य-श्रव्य सामग्री तैयार करें।

कब? भाषण में समय प्रबंधन महत्वपूर्ण होता है। समय प्रबंधन की भावना विकसित कीजिए ताकि मुद्दों अथवा मामलों से संगत आपके योगदानों को देखा एवं उनके विषय में सुना जा सके। प्रत्येक बात का एक समय होता है चाहे वह बोलना हो या चुप रहना। स्मरण रहे कि, 'अनाप-शनाप बोलने से शान्त रहना श्रेयस्कर है'।

कहाँ? आपके दिमाग में संप्रेषण का भौतिक संदर्भ क्या है? उदाहरण के लिए आपके पास कमरे का दौरा करने तथा फ़र्नीचर को पुनः व्यवस्थित करने का समय हो सकता है। यदि आप श्रव्य-दृश्य साधनों का उपयोग कर रहे हैं तो उपलब्धता एवं दृष्टिगोचरता की दृष्टि से जाँच कीजिए ।

क्यों? सुनने वालों को श्रोताओं में बदलने के लिए आपको यह जानने की आवश्यकता है कि वे आपकी बात क्यों सुनें तथा यदि आवश्यक हो तो उन्हें ऐसा बताएँ भी कि सुनने के लिए कौन सी बात उन्हें प्रेरित करती है? इसका अर्थ यह है कि आपको पता है कि आप क्यों संचार करना चाहते हैं अर्थात् आप जो बात कहने जा रहे हैं, उसके महत्त्व, मूल्य अथवा रुचि के बारे में भी आप जानते हैं।

क्रियाकलाप 3

जिन श्रोताओं को आपने सुना है उनमें से सबसे अच्छे वक्ता को याद करें। बताइए कि वह क्यों अच्छा था/अच्छी थी।

गैर-शाब्दिक संप्रेषण

गैर-शाब्दिक कौशल जो कभी-कभी दृश्य-कौशल भी कहलाते हैं आपकी अनकही बात को भी व्यक्त कर देते हैं। वे संप्रेषण के लिखित एवं टंकित तरीके के साथ संप्रेषण-प्रक्रिया का एक भाग बन जाते हैं।
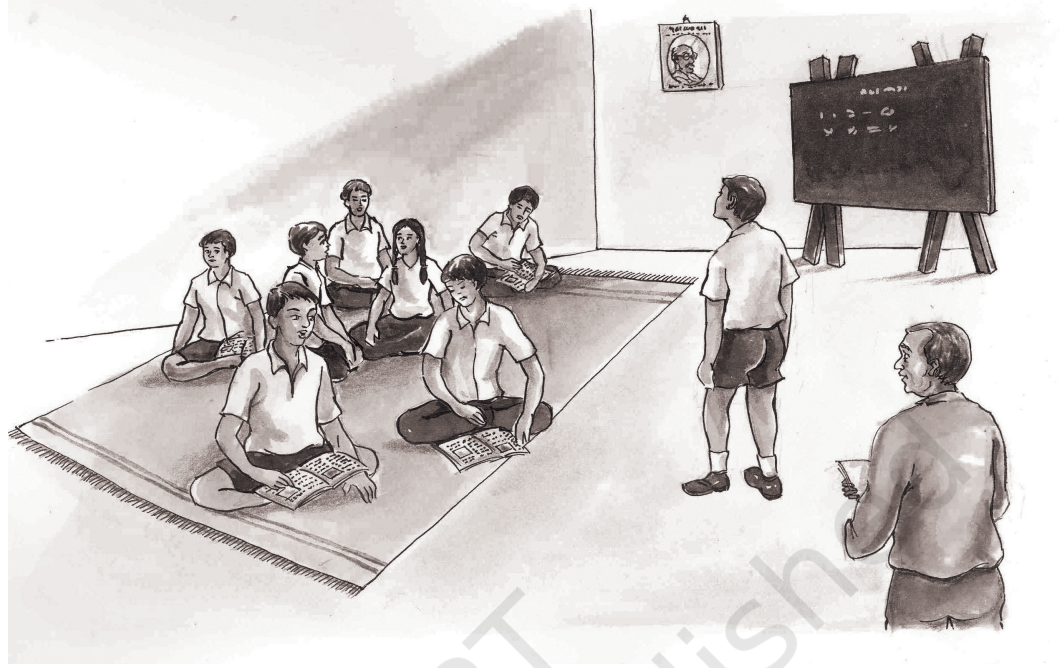
श्रोतागण से अनुचित दृष्टि संपर्क

गैर-शाब्दिक संकेतों में निम्नलिखित शामिल हैं –

- शरीर की मुद्रा या भाषा (हाथ बाँधे रहना, खड़ा होना, बैठना, तनावमुक्त, तनावयुक्त, हाव-भाव, चेहरे की भंगिमा, आँख मिलाना, मुद्रा)
- प्रेषक और ग्राही के मन के भाव (उदाहरण के लिए चिल्लाना, उकसाते हुए बोलना, उत्साह)
- लोगों के बीच अन्य संबंध (उदाहरण के लिए, दोस्त, शत्रु, व्यावसायिक समानताएँ अथवा अंतर्वैयक्तिक समानताएँ अथवा अंतर, आयु समानताएँ अथवा भिन्नताएँ, दार्शनिक समानताएँ, या भिन्नताएँ, मनोवृत्तियाँ एवं अपेक्षाएँ)

आँख मिलाकर बात करना (नेत्र संपर्क) – यह अंतर्वैयक्तिक संप्रेषण का एक महत्वपूर्ण माध्यम है, जो संप्रेषण के प्रवाह को नियंत्रित करने में मदद करता है। यह अन्य व्यक्तियों में रुचि दर्शाता है। इसके अतिरिक्त, श्रोताओं के साथ आँख मिलाकर बात करने से वक्ता की विश्वसनीयता बढ़ती है। जो वक्ता आँखों के संपर्क से शुरुआत करता है, संप्रेषण के प्रवाह को बनाए रखता है तथा रुचि, सरोकार, प्रगाढ़ता एवं विश्वसनीयता प्रदर्शित करता है।

चेहरे की अभिव्यक्तियाँ – मुस्कुराना एक सशक्त संकेत है जो इन्हें अभिव्यक्त करता है –

- प्रसन्नता
- मित्रता
- संबंध की प्रगाढ़ता
- पसंद
- संबंध

इस प्रकार, यदि आप बार-बार मुस्कराएँगे तो लोग आपको पसंद करेंगे, मित्र के रूप में देखेंगे, आपके प्रति स्नेह रखेंगे और आपसे निकटता महसूस करेंगे। मुस्कुराहट प्रायः संक्रामक होती है इससे सुनने वाला अनुकूल ढंग से प्रतिक्रिया करेगा एवं ज़्यादा से ज़्यादा सीखेगा।

हाव-भाव – यदि आप बोलते समय हाव-भाव नहीं दर्शाते तो लोग आपको उबाऊ, संवेदनहीन एवं उत्साहहीन मान सकते हैं। जीवंत एवं सक्रिय शिक्षण शैली ध्यान आकर्षित करती है, विषय को ज़्यादा रुचिकर बनाती है, शिक्षण को सुगम बनाती है तथा मनोरंजन भी प्रदान करती है। सिर हिलाना (जो हाव-भाव का एक रूप है), सकारात्मकता को संप्रेषित करता है तथा यह प्रदर्शित करता है कि वे आपको सुन रहे हैं।

अंग-विन्यास – आप टहलने, बात करने, खड़े होने एवं बैठने के तरीके से अनेक अलग-अलग संदेश संप्रेषित करते हैं। सीधे खड़े होना, किंतु तनकर नहीं तथा आगे की ओर हल्के से झुकना यह संप्रेषित करता है कि आप से बेझिझक बातचीत की जा सकती है, आप ग्रहणशील एवं मित्रवत् हैं। इसके अतिरिक्त, जब आप और आपके श्रोता एक-दूसरे के सामने होते हैं, तो अंतर्वैयक्तिक घनिष्ठता का विकास होता है। पीठ करके बैठना, फ़र्श अथवा छत की ओर देखने जैसी स्थिति से बचना चाहिए। इससे यह संप्रेषित होता है कि आप इस विषय में कोई रुचि नहीं रखते।

निकटता – सांस्कृतिक मूल्य यह इंगित करते हैं कि अन्य लोगों के साथ पारस्परिक क्रिया करने में उनसे कुछ दूरी रखी जानी चाहिए। दूसरों के स्थान पर बेहिचक प्रवेश करने से उन्हें जो असुविधा होती है उनके संकेतों को समझना चाहिए। इनमें से कुछ हैं –

- शरीर को आगे पीछे हिलाना - डुलाना
- पैर हिलाना
- (पैर से) थपथप करना
- नज़र न मिलाना

कॉलेज की बड़ी कक्षाओं में अथवा बड़े सभाकक्ष में अथवा प्रस्तुतीकरण कक्ष में श्रोताओं के अतिनिकट जा पहुँचने की समस्या नहीं है क्योंकि वहाँ दूरी काफी होती है। इससे बचने के लिए कमरे में इधर-उधर घूमें ताकि श्रोताओं के साथ पारस्परिक संवाद बढ़ा सकें। पास जाने से आप आँखों से संपर्क कर सकते हैं तथा सुनने वाले के लिए बोलना अथवा संप्रेषित करना संभव हो पाता है।

पराभाषिक – भाषेतर संप्रेषण के इस रूप में छह वाक् तत्त्व शामिल होते हैं सुर, तारत्व, लय, ध्वनिरूप, प्रबलता और उतार-चढ़ाव।

भाषण को ज़्यादा से ज़्यादा प्रभावी बनाने के लिए अपनी आवाज़ के इन छह तत्वों में फेरबदल करना सीखें। शिक्षकों या संप्रेषकों के बारे में एक आम आलोचना यह है कि वे एक सुर में बोलते हैं। श्रोतागण इन शिक्षकों अथवा संप्रेषकों को उबाऊ एवं नीरस पाते हैं। कक्षा में बैठे विद्यार्थी यह बताते हैं कि जब वे ऐसे अध्यापकों को सुनते हैं जिनकी आवाज़ के लहज़े में उतार-चढ़ाव नहीं होते तो वे उनसे कम सीख पाते हैं और उनकी रुचि समाप्त हो जाती है।

क्रियाकलाप 4

सुर (लहज़ा), तारत्व, लय, ध्वनिरूप, प्रबलता तथा उतार-चढ़ाव को परिभाषित कीजिए। इनमें से हरेक में फेर-बदल करके अभ्यास कीजिए।

क्रियाकलाप 5

अपने भाषिक (शाब्दिक) एवं भाषेत्तर (गैर-भाषिक) कौशलों में सुधार लाने के लिए किसी वीडियो/ऑडियो टेप पर अपने कथन एवं प्रस्तुति के एक भाग को रिकॉर्ड करें। तब किसी सहकर्मी अथवा मित्र से उसमें संशोधन के लिए सुझाव देने के लिए कहें।

हास-परिहास – अधिक सुखद एवं तनावरहित वातावरण के एक साधन के रूप में हास-परिहास की अक्सर अनदेखी की जाती है। कक्षाओं में

unit1_30june_asCorrected.indd 99 11-09-2017 12:06:48 PM

आइए पुनः स्मरण करें

- प्रत्येक व्यक्ति को अपने विचार कारगर ढंग से व्यक्त करने के लिए संप्रेष्य साधनों से संपन्न होना चाहिए, चाहे यह व्यक्तिगत उद्देश्य के लिए हो अथवा अपने कार्य के उद्देश्य से।
- संप्रेषण कौशल वे योग्यताएँ हैं जो सूचना को प्रभावी ढंग से भेजने एवं प्राप्त करने में हमारी मदद करते हैं। वे स्वाभाविक या उपार्जित हो सकते हैं।
- संप्रेषण कौशल वे विविध व्यवहार हैं जो दूसरों को सूचना देने में सहायक होते हैं। इस प्रक्रिया के लिए सोचने, बोलने, सुनने, पढ़ने, लिखने, दृश्य कल्पना करने तथा शरीर की मुद्रा में से एक अथवा उससे अधिक कौशल की ज़रूरत पड़ती है।

हास-परिहास को प्रायः प्रोत्साहित नहीं किया जाता है। परिहास से संप्रेषक एवं श्रोता दोनों का तनाव दूर होता है। हर व्यक्ति को स्वयं पर हँसने की योग्यता का विकास करना चाहिए तथा श्रोता को भी उसके लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। इससे वातावरण मैत्रीपूर्ण बनता है जिससे संप्रेषण बेहतर होता है।

अगला अध्याय इस इकाई का अंतिम अध्याय है, जिसका शीर्षक है वैश्विक समाज में रहना और काम करना। जिसमें परिवार, समुदाय तथा वैश्विक समाज के उन विभिन्न परस्पर संबद्ध संदर्भों पर प्रकाश डाला गया है जिनका एक व्यक्ति विकास-क्रम के दौरान सामना कर सकता है।

मुख्य शब्द

संप्रेषण कौशल, चिंतन, पठन, लेखन, सुनना, बोलना, गैर-शाब्दिक कौशल

■ समीक्षात्मक प्रश्न

1. संप्रेषण कौशल के महत्त्व की चर्चा कीजिए।
2. संप्रेषण कौशलों का नाम बताइए तथा प्रत्येक का वर्णन कीजिए।
3. ''गैर-शाब्दिक या भाषेतर कौशल'' शाब्दिक कौशल के समान महत्वपूर्ण नहीं है'' इस पर टिप्पणी कीजिए।
4. दो अनजान व्यक्ति रेलगाड़ी में आपस में मिलते हैं। उन दोनों के बीच हुई प्रभावकारी बातचीत को लिखित रूप में प्रस्तुत कीजिए।
5. आपके अनुसार कौन-से तीन संप्रेषण कौशल सबसे अधिक महत्वपूर्ण हैं? और क्यों?

■ प्रयोग 7

प्रभावशाली संप्रेषण कौशल

थीम – संप्रेषण शैलियों एवं संप्रेषण-कौशल को समझना

कार्य – स्वयं की संप्रेषण शैली एवं कौशलों का विश्लेषण

उद्देश्य – छात्र/छात्राएँ अपने स्वयं के कौशलों का विश्लेषण कर सकेंगे अर्थात् वैयक्तिक क्षमताओं एवं सीमाओं तथा इन पर नियंत्रण पा सकेंगे।

क्रियाविधि

- आपने इस अध्याय में यह समझ लिया है कि हमारे संप्रेषण-कौशल में दो एक जैसे महत्वपूर्ण घटक हैं अर्थात् शाब्दिक एवं गैर-शाब्दिक या भाषेतर। अतः संप्रेषण कौशल का विश्लेषण करते समय व्यक्ति को चाहिए कि वह दोनों संघटकों पर ध्यान दें।
- जब आपके सहपाठी आपस में बात कर रहे हों तो प्रत्येक सहपाठी के शरीर की भाषा, निकटता तथा पराभाषिक प्रक्रिया को ध्यान से देखें-समझें।

चरण 1 – विद्यार्थियों से किसी ऐसे विषय के बारे में सोचने के लिए कहें जिस पर सोचकर वे 5 मिनट तक अपने विचार बोल कर प्रस्तुत कर सकें।

चरण 2 – विद्यार्थियों से कहें कि वे अपनी इच्छानुसार किसी भी क्रम में प्रस्तुति शुरू करें, या तो नाम के अनुसार वर्णमाला के क्रम में अथवा अपनी-अपनी बारी से।

चरण 3 – अब प्रत्येक वक्ता के लिए निम्नलिखित जाँच सूची का प्रयोग करके उसकी शैली का विश्लेषण करें।

विशेषताएँ	**विवरण**	**श्रेणी-निर्धारण**		
		3	2	1
विषय-वस्तु	आप जैसे युवा विद्यार्थियों के लिए उपयुक्त			
शरीर की मुद्रा	• सीधे खड़े होना • खड़े होना किंतु तन कर • कुछ झुका हुआ			
नेत्र संपर्क	• बारंबारता • एक कोने से दूसरे कोने तक सिर को हिलाना			
चेहरे का हाव-भाव	• प्रसन्नता • मित्रता • प्रगाढ़ता			
निकटता	• शरीर को आगे पीछे हिलाना-डुलाना • पैर से थप-थप करना • पैर हिलाना			
पराभाषिक	• सुर (लहज़ा) • तारत्व • लय • ध्वनिरूप • प्रबलता			
कुल प्राप्तांक				

चरण 4 – विद्यार्थियों के एक समूह की प्रस्तुति के बाद उनके द्वारा प्राप्त अंकों का योग निकालिए एवं उसका मिलान वक्ता के प्रति आपके मन में पड़ी छाप से कीजिए।

चरण 5 – प्रत्येक वक्ता की प्रभावशीलता के बारे में निष्कर्ष निकालिए तथा उन लक्षणों का पता लगाइए जिनके लिए उस वक्ता को अपने संप्रेषण कौशल में सुधार लाने के लिए अभ्यास करने की आवश्यकता है।

वैश्विक समाज में जीवन-यापन और कार्य

अध्याय
8

उद्देश्य

इस अध्याय को पूरा करने के बाद शिक्षार्थी समर्थ होंगे –

- व्यक्ति, परिवार, समुदाय और वैश्विक समाज के बीच का संबंध समझने में।

पिछले अध्यायों में आपने अपने बारे में बहुत कुछ सीखा है। दूसरों को समझने के लिए अपने आप को समझना पहला कदम है। प्रत्येक व्यक्ति सामाजिक परिप्रेक्ष्य में जीता और बढ़ता है। इसलिए व्यक्ति के विकास और व्यवहार को समझने के लिए उसके तात्कालिक संदर्भों जैसे उसके परिवार और बड़े सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश को समझना अनिवार्य होता है।

जैसे-जैसे व्यक्ति बढ़ता और विकसित होता है, वह दूसरों के साथ संबंधों का विकासशील नेटवर्क बनाता/बनाती है। व्यक्ति के लिए परिवार प्रारंभिक और अति निकटतम परिवेश है। बाल्यावस्था के दौरान व्यक्ति की गतिविधियाँ, भूमिकाएँ और परस्पर आपसी संबंध सामान्यत: परिवार के अनुसार निर्मित होते हैं। जैसे-जैसे बच्चा बढ़ता है उसका दूसरे परिवेशों जैसे कि विद्यालय, साथियों और आस-पड़ोस के साथ परस्पर संबंध बढ़ता है।

ये सभी प्रणालियाँ अपेक्षाकृत बड़ी संस्कृति और संदर्भ में कार्य करती हैं जिनमें आस्थाएँ, मान्यताएँ, संसाधन, अवसर और बाधाएँ शामिल हैं। रोजमर्रा के जीवन के सभी पहलू जैसे कि भोजन, पोषण, वेशभूषा, संसाधन, संचार तरीके और कार्य नीतियाँ एवं परस्पर आपसी संबंध व्यक्ति के अपने समाज की प्रणालियों द्वारा और दूसरे समाज द्वारा भी प्रभावित होते हैं। यहाँ तक कि सुदूर परिवेश में भी कोई परिवर्तन, सकारात्मक विकास या द्वंद्व हो तो वह दूसरी व्यवस्थाओं तक फैलता है और व्यक्ति को भी प्रभावित करता है। यह विशेष रूप से वैश्वीकरण के वर्तमान युग में लागू होता है, जहाँ देशों के बीच सीमाएँ कम कठोर हैं और विश्व के देश तमाम तरीकों – भौगोलिक रूप से, आर्थिक रूप से, सांस्कृतिक और राजनैतिक रूप से – एक-दूसरे के साथ जुड़ रहे हैं। ''वैश्वीकरण'' शब्द का अर्थ है विश्व के लोगों के बीच परस्पर अधिक जुड़ाव और वस्तुओं,

सेवाओं, धन और सूचना के रूप में अधिक आदान-प्रदान। यद्यपि वैश्वीकरण नया विकास नहीं है, बस नयी प्रौद्योगिकी, विशेषतया दूरसंचार के क्षेत्र में, इसके आने से गति बढ़ गई है।

प्रत्येक समाज विश्व के दूसरे समाजों में होने वाली घटनाओं और घटनाक्रमों से अधिक से अधिक प्रभावित होता है। उदाहरण के लिए यू.एस.ए. के 2008 के सब-प्राइम संकट ने विश्व भर की अर्थव्यवस्था को प्रभावित किया है और इसका कुछ प्रभाव भारत के बाज़ारों, परिवारों और व्यक्तियों की वित्तीय स्थिति पर देखा गया। बहुत से लोगों ने शेयरों और स्टॉकों में निवेशित धन गंवाया है, यहाँ तक कि उनकी नौकरियाँ भी चली गई हैं। अतः उन्हें अपने जीवन स्तर में काफ़ी बदलाव करना पड़ा। फ़ैशन का चलन इसका दूसरा उदाहरण है। हमने अपने परिधान में बढ़-चढ़कर अंतर्राष्ट्रीय फ़ैशन को अपनाया है। इसी प्रकार कपड़ों (पहनावे) की शैली ने विश्व भर के शहरी युवकों को लुभाया है, और भारत के ग्रामीण और शहरी युवक भी इससे अछूते नहीं हैं। इस प्रकार से हमारा दैनिक जीवन न केवल हमारे परिवारों, स्कूलों और आस-पड़ोस के अनुभवों से प्रभावित होता है अपितु वैश्विक स्तर पर होने वाली घटनाओं से भी प्रभावित होता है।

यहाँ यह नोट करना महत्वपूर्ण है कि हम निष्क्रिय इकाइयाँ नहीं हैं कि राह में आने वाले किसी भी प्रभाव को यूँ ही आत्मसात कर लेते हैं। प्रत्येक व्यक्ति एक सक्रिय प्राणी है जो अपने विशिष्ट व्यक्तित्व और सांस्कृतिक संवेदनाओं के अनुसार बाह्य प्रभावों या आगमों को समझता है। फैशन के उदाहरण से ही लें। टी-शर्ट के साथ जींस पहनना पश्चिमी शैली है। यहाँ टी-शर्ट के स्थान पर कुरता पहनना इसी अनुकूलन को दर्शाता है। यही नहीं, बदले में प्रत्येक व्यक्ति भी उन पर्यावरणीय परिप्रेक्ष्यों या व्यक्तियों को प्रभावित करता है जिनके साथ वह संपर्क में आता है। उदाहरण के लिए यह भी सामान्यतः देखा जाता है कि किशोर या छोटे बच्चे अपने माता-पिता को नए वाहन के ब्रांड या रंग के संबंध में या छुट्टी के दिनों में घूमने जाने के लिए स्थानों के बारे में बताते हैं। अतः प्रभाव दो-दिशाओं वाला या दोतरफा होता है। यहाँ तक कि अपने ही परिवार में आप पाएँगे कि न केवल आप अपने माता-पिता से प्रभावित हो रहे हैं बल्कि कुछ क्षेत्रों में वे भी आपसे प्रभावित हो रहे हैं।

क्रियाकलाप 1

अपने परिवार से दो से पाँच ऐसे उदाहरण सोचिए और लिखिए जहाँ आपने अपने माता-पिता या दूसरे सदस्यों के निर्णयों को प्रभावित किया है।

संदर्भ और व्यक्ति गतिशील हैं, ये लगातार बदलते रहते हैं। अपने जीवनकाल में व्यक्ति विकास और स्थिति की विभिन्न अवस्थाओं से गुज़रता है। साथ-ही-साथ परिवेशों में भी परिवर्तन होता है। वर्तमान समय में, परिवर्तन की गति इतनी तेज़ है कि जिसे हम पीढ़ी अंतर के रूप में जानते हैं, यह केवल दो पीढ़ियों के बीच में ही नहीं होता अर्थात् माता-पिता और बच्चों के बीच या दादा-दादी और पोता-पोती के बीच ही नहीं होता बल्कि यह बड़े और छोटे भाई-बहनों (संतानों) के बीच में भी पाया जा सकता है। तीन वर्ष पूर्व जो स्वीकृत प्रथा थी या सोचने का तरीका था, वह अब बदल सकता है। आप में से जिनके बड़े या छोटे भाई-बहन हैं ऐसे उदाहरण सोच सकते हैं जब आप और आपके भाई-बहनों के बीच किसी बात को लेकर झगड़ा हुआ हो क्योंकि आप दोनों को लगा कि आप जो कह रहे थे वह उपयुक्त तरीका था। क्या आपको याद है कि आपने अपने छोटे भाई-बहनों या बच्चों से कभी यह कहा है कि– ''जब मैं आपकी उम्र का था तो...।''

अत:, व्यक्ति अपने संदर्भ/परिवेश से जुड़े होते हैं और दोनों एक-दूसरे को बनाते हैं। आपने 'प्रस्तावना' अध्याय में पढ़ा था कि व्यक्तियों का अपने परिवेश से निकट संबंध होता है। यह उसकी पुनरावृत्ति है। किसी के जीवन की गुणवत्ता विभिन्न पारिस्थितिकीय परिवेशों से प्रभावित होती है जिसमें परिवार, आस-पड़ोस, समुदाय और समाज स्थानीय तथा वैश्विक दोनों शामिल होते हैं। इकाई 2 में हम अपने आप को समझने से परिवार, स्कूल, समुदाय और समाज के संदर्भों को समझने की ओर बढ़ेंगे।

मुख्य शब्द

वैश्वीकरण, द्वि-दिशात्मक तरीके, संस्कृति, अनुकूलन, संदर्भ

समीक्षात्मक प्रश्न

1. 'वैश्वीकरण' का वर्णन करें, अपने कुछ ऐसे दैनिक कार्यों और रुचियों का पता लगाएँ जो वैश्विक प्रवृत्तियों या घटनाओं से प्रभावित हुए।
2. उन तरीकों की चर्चा करें जिनके द्वारा आप सोचते हैं कि आपने अपने माता-पिता को प्रभावित किया है।
3. अपने परिवार के बारे में सोचें और ऐसी दो घटनाओं का पता लगाएँ जहाँ आपको लगा कि आपके माता-पिता और आपके बीच पीढ़ी का अंतर है।